THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182395

UNIVERSAL
LIBRARY

OUP—23—4—1-69—5,000.

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

H81 P91K   PG H319   No. H 2733

प्रसाद, जयशंकर

before the date

कामायनी। सं. 2006

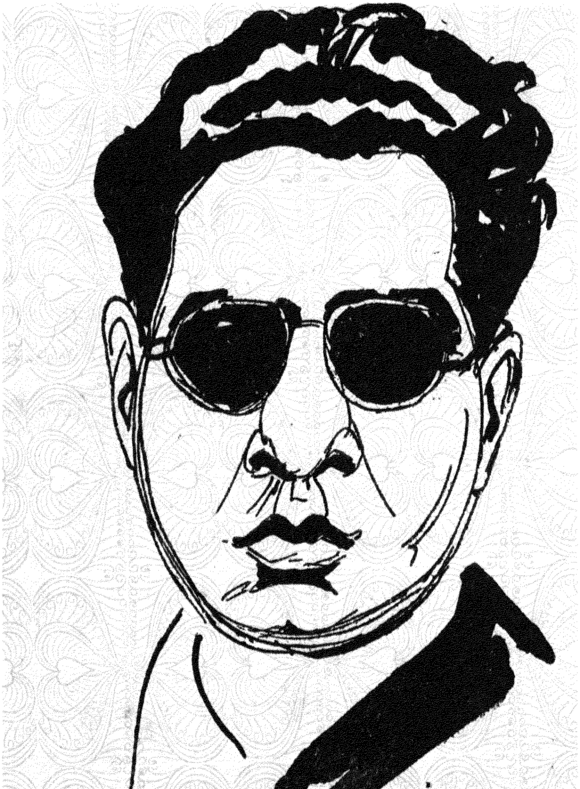

कान्त-साहित्य-सदन
अहुवरिया, मिर्जापुर

जलन

स्व० कुशवाहा 'कान्त'

प्रकाशक
त्रिलोक कुशवाहा
क्रान्त साहित्य सदन,
महुवरिया, मिर्जापुर

●
नवीन संस्करण
ढाई रुपया
●

मुद्रक
चिनगारी प्रेस, वाराणसी

'तुरन' को

भू

मि

का

"चलिये भोजन कर लीजिये !"

"भोजन की इच्छा नहीं है"—मैंने कहा।

"इच्छा क्यों नहीं है ? भला इस तरह भी कोई क्रोध करता है ? दादी ने जरा-सी बात कह दी, बस आप रूठ बैठे।"

"मैं नहीं खाऊँगा।"—मैंने कहा।

उसके मुँह से एक सर्द आवाज निकली। बोली—"मत खाइये, मैं भी नहीं खाऊँगी।"

"तुम...तुम भी !...." मैंने आश्चर्य और हैरानी से चौदह वर्ष की उस बालिका के मुँह की ओर देखा। यह भी कितनी नादान है कि बात-बात में जिद। आखिर इसे मुझमें इतनी क्यों ममता है ? यह क्यों मेरे लिये इतनी परेशान रहती है ? अभी चार ही दिन हुए, मेरे एक गरीब रिश्तेदार की यह लड़की मेरे घर आई है—इसी के बीच उसने मेरी सारी फिक्र अपने ऊपर ले ली है। नाम है उसका 'तोरणवती' मगर लोग उसे तुरन ही कहकर पुकारते हैं। अब तक तो मेरे रूठ जाने पर कोई मनानेवाला न था और मैं एकाध दिन बिना खाए ही रह जाता था, मगर तुरन के आने से मुझे रोज खाना ही पड़ता है। वह ऐसी हठी लड़की है कि....

यौवनरश्मि द्वारा प्रोद्भासित उसके भोले चेहरे की ओर मैंने देखा। वह उदास मुँह और गीली आँख लिये हुए खड़ी थी।

मैंने कहा—"मेरे लिए इतना अफसोस क्यों करती हो तुरन, चलो मैं खाये लेता हूँ।"

❀ ❀ ❀ ❀

मैं उन अभागे व्यक्तियों में से हूँ जिनके साथ नियति ने गहरा मजाक किया है। अपनी श्रीमती जो ऐसी मिलीं कि मुझे घर से पूरी उदासीनता हो गई। प्रेम की दो बातें कभी मेरे कानों में न आईं। मैं अभागा लेखक, केवल अपना शरीर लिये कुर्सी पर बैठा-बैठा लिखा करता था—परन्तु तुरन के आते ही मेरा उजड़ा संसार हरा भरा हो गया। दिल के बिखरे हुए टुकड़े एकत्रित होकर तुरन की ओर आकर्षित हो गये। हृदय का स्वच्छ प्रेम पाकर शान्ति मिली।

तुरन को मेरा काम करने में बहुत आनन्द आता था। वह मेरा कमरा नित्य साफ कर दिया करती थी, मेरी धोतियों पर साबुन मल देती थी और खा चुकने पर अपने हाथों द्वारा लगाया हुआ पान मुझे देती थी—मैं हर्षातिरेक से विभोर हो उठता था।

तुरन के हर एक काम से यही प्रकट होता था कि वह भी मेरी ओर आकर्षित है। कभी-कभी मैं उसके हाथ को अपने हाथ में लेकर 'सामुद्रिक' देखता, कितना आनन्द आता!

उस दिन अपने कमरे में बैठा हुआ लिखने में निमग्न था, तुरन दरवाजे के सामने आई, उसने मुझे देखा नहीं और अपने सर से धोती हटाकर कुर्ती पहनने लगी। मेरी दृष्टि उधर जा पड़ी। देखा!—जी भर कर देखा। पराए की खूबसूरती देखना पाप है, मगर वह तो मेरे लिये पराई थी नहीं।

रात को मैंने उससे कहा—"तुरन, तुम्हारे चले जाने पर घर सूना हो जायगा।"

वह हँस पड़ी। बोली—"मेरी जैसी कितनी दासियाँ आपके घर रोज आती हैं।"

दूसरे दिन रात में दादी फिर एकाएक मुझपर बिगड़ उठीं। घर भर में हमारी और तुरन की घनिष्ठता के विषय में चर्चा हो गई थी, इसी कारण दादी अक्सर मुझे बिगड़ा करती थीं। उस दिन बड़ी ग्लानि हुई। तुरन मेरे लिये पान लायी थी। मगर बिना पान खाये ही मैं अपने कमरे में चला आया और आधी रात तक न जाने क्या-क्या सोचता रहा। सोचा, तुरन भी मेरे ही लिये तो बिगाड़ी जाती है—उफ़!

"उठिये! ज्यादा सोने से तबियत खराब हो जायगी।"—तुरन ने मेरे कमरे में आकर कहा। रात की ग्लानि से मैं नौ बज जाने पर भी न उठा था। मैं उठता भी नहीं मगर तुरन ने मुझे जबरदस्ती उठाया। स्नान कर बाहर बैठक में चला आया। कुछ खाया भी नहीं। दोपहर को भी नहीं खाया। सारा दिन भूखा ही बैठक में बैठा रहा।

"आप दोपहर को खाने नहीं आये, मेरी तबियत बड़ी बेचैन रही" शाम को मेरे आने पर तुरन ने कहा। पता लगाने पर मालूम हुआ कि तुरन ने भी अभी तक एक दाना मुंह में नहीं रखा है।

दादी और मेरी श्रीमती जी बराबर उससे जला करतीं। दिन में उसे सैकड़ों झिड़कियाँ सहनी पड़ती थीं, फिर भी वह प्रसन्न थी। न जाने क्यों?

उस दिन शायद दादी ने कुछ बुरा-भला कहा था, अतः शाम को वह आकर मुझसे बोली—"अब मुझसे पान न माँगा कीजियेगा। दादी बिगड़ती हैं।"

मैंने हृदय पर वज्र रखकर सब सुना। किस मुँह से तुरन को बताता कि मैं तो पहले पान छूता भी नहीं था—आजकल केवल उसके प्रेम के चिन्ह स्वरूप पान खाने लगा था।

❀ ❀ ❀ ❀

प्रातःकाल ही तुरन ने मुझसे अपने घर एक पत्र लिख देने का अनुरोध किया। मैंने लिख दिया। कबूतरों का शौक मेरे छोटे भाई को है। उसके दो कबूतर हमारे सामने आकर बैठ गये और आपस में प्रेम-प्रदर्शन करने लगे। मैं और तुरन, दोनों अपलक दृष्टि से वह दृश्य देख रहे थे। कितने सुखी थे वे दोनों क्षुद्र जीव—काश, हम भी ऐसे सुखी हो सकते!

उस दिन ज्यों ही मैं दोपहर को घर आया, तुरन झाड़ू लिए हुए मेरे कमरे में आ पहुँची और बुहारने लगी। मैं कपड़े उतार कर वहीं खड़ा रहा। वह बोली—"आप कपड़े उतार चुके हों तो बाहर जाँय, नहीं कोई देख लेगा तो...." मैं कमरे से बाहर निकल आया। भोजन करने के बाद उसने कहा—"पान रखा है, ले लीजियेगा।"

मुझे बड़ी मानसिक व्यथा हुई। मैंने कहा—"मैं पान वान नहीं खाऊँगा..."

उसने फीकी हँसी हँसते हुए कहा—"मैंने नहीं लगाया है, चन्दा बीबी ने लगाया है।"

चन्द्रकुमारी मेरी बहन का नाम है, मगर उसे सब चन्दा ही कहा करते हैं।

बैठक से जब घर में आया तो देखा, तुरन मुँह लटकाये हुए छत पर खड़ी है। पूछा—"क्या बात है तुरन?"

"मैं चली जाऊँगी। पोस्टकार्ड का दाम ले लीजिये न—आपने मेरे घर पर चिट्ठी जो लिखी थी—" कहते-कहते उसने मेरे हाथ पर एक इकन्नी रख दी। मैंने उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया। दो मिनट तक हम दोनों अपनी सुध भूले रहे। फिर कहा—"मुझे इकन्नी से खरीदने की कोशिश न करो तुरन! तुमने तो मुझे बेदाम ही खरीद लिया है!"

"अब आपसे अधिक प्रेम नहीं बढ़ाऊँगी, नहीं तो यहाँ से जाने पर जी बेचैन रहेगा"—उसने कहा।

मैंने सन्दूक से एक 'जम्फर' और एक 'बाडी' निकाल कर उसको दी—"यह लो मेरी भेंट!"

और उसके कुछ कहने के पूर्व ही मैं वेदनाच्छन्न हृदय लिये कमरे के बाहर हो गया।

जमींदारी के काम का कुछ ऐसा झंझट आ पड़ा कि पिता जी के कहने से मुझे दूसरे दिन इलाहाबाद जाने की तैयारी करनी पड़ी। हाईकोर्ट में कोई तारीख थी। छटपटा कर रह गया। जानता था कि अब तुरन जल्द ही जाने वाली है। कल मैं इलाहाबाद चला जाऊँगा और ४-५ दिन के पहले लौट भी न सकूँगा, इस बीच तो मेरे हृदय की प्रतिमा अपने घर चली जायगी।

तुरन ने जब मेरे इलाहाबाद जाने का हाल सुना तो व्याकुल हो उठी। उसने दिन भर कुछ खाया नहीं। मेरा वक्त भी बड़ा बेचैनी से कटा। रात को मुझे तुरन के कमरे से सिसकने की आवाज आई। मैं उधर को ही बढ़ा और उसकी कोठरी के दरवाजे पर आकर खड़ा हो गया। भीतर तुरन सिसक-सिसक कर रो रही थी।

धीरे से दरवाजा खोलकर भीतर आ गया। मुझे देखते ही उसने अपनी आँखें पोंछ लीं।

"घबड़ाओ नहीं तुरन!..."

"आप चले जाँय, नहीं कोई देख लेगा तो..."

"देखने दो तुरन!"—कहता हुआ मैं उसकी चारपाई पर जाकर बैठ गया। मेरी आँखें गीली हो रही थीं। मैंने कहा—"क्या इसी दिन के लिए मैंने तुम्हें अपने हृदय में स्थान दिया था तुरन, मैं कल इलाहाबाद चला जाऊँगा और तुम मेरे लौटने के पहले ही यहाँ से चली जाओगी....फिर शायद ही हम तुम मिल सकें!"

तुरन हाँफ रही थी—"आप चले जायँ। मुझे रोने दें—जी भरकर रोने दें!"

"तुरन! मैं एक कहानी सुनाने आया हूँ..."

"कहानी?"—उसने आश्चर्य से कहा।

"हाँ, आज मैं तुमसे एक प्यासे आदमी की कहानी कहूँगा, जो जिन्दगी भर तक प्रेम की जलन में झुलसता रहा। मेरी ही तरह उसके दिल में भी दारुण जलन थी, सुनो..." मैं कहने लगा और तुरन दत्तचित्त हो सुनने लगी...

दुनियाँ उन्हें गरीब कहती है। भर पेट खाना और नींद भर सोना उन्हें हराम होता है। रूखे-सूखे टुकड़ों पर गुजर कर, निर्जन गाँवों में रहते हुए वे अपना जीवन निर्वाह करते हैं। उनकी मुखाकृति में विवशता और शरीर में गरीबी टपकती है। जन्म से मृत्यु-पर्यन्त उनका जीवन तूफान में पड़ी हुई नाव की तरह डगमगाता रहता है। फिर भी ईश्वर की इच्छा पर भरोसा रखते हुए जो कुछ मिल गया उसी पर वे सन्तोष करते हैं।

शहर काशगर से दूर एक छोटी-सी बस्ती है, जिसमें खानाबदोश कबायली रहा करते हैं। बस्ती से कुछ दूर हटकर एक मनोहर तालाब है। चारों ओर बने हुए पक्के घाट एवं बड़े-बड़े घने वृक्षों की सघन छाया से तालाब पर निर्जनता का साम्राज्य छाया रहता है। इस समय अस्तप्राय सूर्य की किरणें तालाब के पानी में स्वर्ण-रेखा-सी चमक रही हैं, जिसमें पानी में पाँव लटका कर बैठी हुई उस बालिका के मुख की यौवन रश्मि अद्भुत समाँ उपस्थित कर रही है। मैला-कुचैला पाजामा और पुराना कुरता पहनने पर भी उसकी खूबसूरती छन-छन कर बाहर आ रही है। सुडौल शरीर, पन्द्रह वर्ष की कोमल कलिका, चाँद-सा मुखड़ा बड़ी-बड़ी आँखें, गुलाबी अधरोष्ठ, सब कुछ ऐसे कि हाँ!

पत्ते खड़के और तालाब के ऊपर एक सुन्दर नवयुवक खड़ा दिखाई पड़ा। बाईस साल की उम्र और भीनती हुई मूँछें, सचमुच वह सुन्दर लग रहा था। नवयुवक थोड़ी देर तक अतृप्त नेत्रों से, पानी के साथ कल्लोल करती हुई उस सुन्दर बालिका की ओर

देखता रहा। धीरे-धीरे वह सीढ़ी से नीचे उतरने लगा और उसके पीछे आकर खड़ा हो गया।

"मेहरुन्निसा !" उसने काँपते स्वर में पुकारा।

बालिका ने मानों सुना ही नहीं। वह तन्मय होकर अस्तप्राय सूर्य की ओर देखती हुई जीवन की क्षणभंगुरता का अनुमान लगा रही थी शायद।

युवक ने पुनः पुकारा—"मेहर !"

मेहर चौंक पड़ी, उसने युवक की ओर देखा तनिक क्रोध में।

"मेहर ! तुम तो ऐसी रूठ गई हो, जैसे...." कहता हुआ युवक मेहर के पास आकर बैठ गया।

"जहूर ! तुमसे हजार बार, लाख बार कह चुकी कि तुम मुझे फजूल छेड़ा न करो लेकिन तुम मानते ही नहीं ! मुझे सताने से तुम्हें मिलता क्या है ?" मेहर ने कम्पित स्वर में कहा। उसके चेहरे पर क्रोध के लक्षण अब भी दीख पड़ रहे थे। परन्तु उस कृत्रिम क्रोध के आवरण में छिपी हुई मुस्कराहट, जिसमें हृदयतन्त्री के तारों को झंकृत कर देने की पर्याप्त शक्ति थी, जहूर से छिपी न रही। वह मेहर की प्रतिदिन की झिड़कियों का सहन करने का आदी हो गया था। उसका हाथ अपने हाथ में लेकर बोला—"मेहर ! तुम नाहक ही गुस्सा होती हो। इसमें मेरा क्या कसूर है ? तुम्हीं बताओ जिस वक्त तुम मेरी नजरों से दूर हो जाती हो, उस वक्त मुझे चारों तरफ अँधेरा ही अँधेरा दिखाई पड़ता है।

दिल में मेरे वहशत-सी छा जाती है। मैं रजील नहीं हूँ मेहर ! तुम्हारी मुहब्बत ने मुझे दीवाना बना दिया है ! मैं तुम्हारे लिए तबाह हो रहा हूँ, लेकिन तुम्हें मेरी कुछ फिक्र ही नहीं। मेहर, बोलो वह दिन कब आयेगा जब कि हम तुम एक हो सकेंगे ?"

जहूर की बातें सुनकर मेहर के चेहरे पर हलकी मुस्कराहट

खेल गयी। उसने जैसे लापरवाही से उत्तर दिया—"वह दिन आज ही समझ लो।"

"आज ही समझ लूँ? या खुदा, यह क्या सच है मेहर!" कहते हुए जहूर ने मेहर के गले में हाथ डाल दिया और....और मेहर ने उसे इतने जोरों का धक्का दिया कि वह सम्हलने के पूर्व ही पानी में जा रहा। मेहर सक्रोध बोली—

"बदमाश कहीं के! बराबर तुम मुझे तंग किया करते हो। आज मैं अभी जाकर सारा दास्तान अब्बा से कह दूँगी। कह दूँगी कि तुम अकेली पाकर हमेशा मुझसे शरारत किया करते हो। तुम दुश्मन के बेटे हो। तुम्हारे कबीले और मेरे कबीले में बराबर जंग व दुश्मनी होती आ रही है। तुम इतने दूर अपने कबीले को छोड़कर सिर्फ मेरे लिए यहाँ आते हो। क्या तुम्हें अपनी जान की परवाह नहीं है?"

"है क्यों नहीं मेहर! मगर मैं अपने दिल से मजबूर हूँ।" जहूर कहने लगा, जो अब तक तालाब से बाहर निकल आया और सीढ़ियों पर खड़ा अपने कपड़े निचोड़ रहा था—"मैं जानता हूँ कि शुरू से ही तुम्हारा कबीला हमारे कबीले से दुश्मनी रखता आ रहा है और यह भी जानता हूँ कि मेरा दुश्मन के नजदीक आना खतरे से खाली नहीं, फिर भी मैं मजबूर हूँ अपने दिल से, मजबूर हूँ तुम्हारी भोली सूरत से मेहर! तुम मेरे दिल का राज नहीं समझ सकती।"

"तुम तो बड़े खराब हो जो"—मेहर ने कहा और उसके मदभरे नयन शोखी से नाच उठे। जहूर कहता गया—"मेहर! जहाँ तक मुझे यकीन है, तुम्हारे दिल में भी उतनी ही मुहब्बत है, जितनी कि मेरे दिल में, लेकिन नाहक ही मुझे तड़पाने के लिये तुम अपनी आदत से बाज नहीं आती। माना कि हम लोगों के अब्बाजान एक-एक कबीले के सरदार हैं और दोनों कबीले एक

दूसरे के जानी दुश्मन हैं, लेकिन इससे हमारी मुहब्बत में तो कोई फर्क नहीं आता।"

"मगर हमारी मुहब्बत निभ ही कैसे सकती है जहूर ! मैं तुम्हारे भले के लिए कह रही हूँ। तुम अभी अपने कबीले में लौट जाओ, वर्ना अगर मेरे कबीले का कोई आदमी तुम्हें देख लेगा तो तुम्हारी जान खतरे में पड़ जायगी..." मेहर ने कहा।

जहूर कहने लगा—"मुझ पर खतरा नहीं आ सकता मेहर ! मेरे साथ मेरा वफादार घोड़ा है, वह देखो पेड़ की आड़ में खड़ा है। उसी की जीन में मेरी तलवार भी लटक रही है, जो वक्त पड़ने पर ताजे खून से अपनी प्यास बुझा सकती है।"

"तुम बेवकूफ हो। हट जाओ मेरे रास्ते से ! मैं अभी जाकर अब्बा से तुम्हारी शिकायत करूँगी—" कहती हुई मेहर सीढ़ियाँ चढ़ने लगी। तालाब के ऊपर जाने पर उसने एक नजर जहूर के तन्दुरुस्त घोड़े और जीन से लटकती हुई तलवार पर डाली, तत्पश्चात् तेजी से अपने कबीले की ओर चल पड़ी। जहूर एकटक उसकी ओर देखता ही रहा। उस समय पहाड़ी दृश्य बड़ा ही मनोरम और हृदयग्राही मालूम पड़ रहा था। हरे-हरे पहाड़ों के पश्चिम में अस्त होते हुए सूर्य की सुनहरी किरणें अब भी पृथ्वी पर कहीं-कहीं खेल रही थीं। धीरे-धीरे आती हुई सन्ध्या-कालीन दृश्यावलि हृदय में एक विचित्र कौतूहल पैदा कर रही थी जहूर यह सब निर्निमेष दृष्टि से देख रहा था और देख रहा था अपनी हृद्‌देवी की मनोरम अन्तिम परछाईं, जो घने पेड़ों के बीच में अभी-अभी हो लुप्त हुई थी।

बुड्ढा अब्दुल्ला अपनी झोपड़ी के द्वार पर बैठा हुआ तम्बाकू पी रहा था। आयु-भार से दबी हुई उसकी सफेद दाढ़ी, हवा के झोंके से धीरे-धीरे हिल रही थी। पेड़ के नीचे बँधा हुआ एक सफेद घोड़ा हिनहिना रहा था। साठ वर्ष का बुड्ढा अब्दुल्ला अपने कबीले का

सरदार था। कबीले का एक-एक आदमी—क्या वृद्ध, क्या युवा—उसके विरुद्ध जीभ हिलाने का साहस नहीं कर सकता था। युवावस्था के बीत जाने पर भी उसकी मुखाकृति पर इतना तेज था कि सहसा उसकी आँखों से आँख मिलाना कठिन था।

उस युग में मुसलमानों के गिरोह (कबीले) जंगलों और पहाड़ों में अपने गाँव बसा कर रहा करते थे। खानाबदोशों में उनकी गिनती थी। एक-एक गिरोह का एक-एक सर्दार हुआ करता था। ये कबीले अक्सर एक दूसरे से लड़ा करते थे। यही उनकी दुनियाँ थी। बूढ़ा अब्दुल्ला भी ऐसे ही एक कबीले का सरदार था। वह जितना ही बुड्ढा था, उतना ही साहसी भी। उसके शिथिल हाथ पैरों में अभी भी युवा-रक्त लहरें मार रहा था। जमाना देखी हुई उसकी आँखों से, अभी तक तेज टपकता था। मेहरुन्निसा उसकी बेटी थी।

मेहर को अस्त-व्यस्त दौड़े आते हुए देख बुड्ढा चौंक पड़ा। इतना चौंका कि चारपाई से उठकर खड़ा हो गया और अपनी धँसी, परन्तु विशाल आँखों के ऊपर हथेली की आड़ देकर, देखने लगा कि आखिर मेहर के इस तरह भाग आने का कारण क्या है? मेहर हाँफती हुई आकर खड़ी हो गई। उसके धूलधूसित खूबसूरत चेहरे पर पसीने की बूँदे उभर आयी थीं।

"क्या बात है मेहर?"—बुड्ढे ने प्रश्न सूचक स्वर में पूछा।

"अब्बा! मेरे अच्छे अब्बा!!" मेहर कहने लगी, उसकी साँस अभी तक जोरों से चल रही थी—"मैं परेशान हो गयी हूँ उससे। वह मुझे बेहद तंग करता है, जब कभी मुझे अकेली देखता है, वह अपनी आदत से बाज नहीं आता शैतान कहीं का!"

"कौन तुझे परेशान करता है?"—बुड्ढे की आँखों में उत्सुकता थी।

"वह तो मानों हाथ धोकर पीछे पड़ा है। उसकी हरकतें बेहद गन्दी होती हैं। वह मेरे कन्धे पर हाथ रख देता है—कहता है तुम खूबसूरत हो मैं तुमसे मुहब्बत करता हूँ, मगर मेरी समझ में नहीं आता कि यह मुहब्बत क्या बला है अब्बा, आखिर यह मुहब्बत है क्या चीज ? तुम तो बुजुर्ग हो, जानते होगे।"

"बड़ी नादान है पगली कहीं की—" बुड्ढा खिलखिला कर हँस पड़ा। मगर मेहर को वह हँसी पसन्द न आई। बोली—"तुम उसे मना कर देना अब्बा ! मुझसे छेड़खानी करना ठीक नहीं। वह दुश्मन का बेटा है !"

"दुश्मन का बेटा ?....यानी किसी दुश्मन ने तुझे तंग किया है ?"

"तुम ठीक समझे अब्बा ! रोज-ब-रोज उसकी शरारत बढ़ती जा रही है। जब मैं तालाब पर जाती हूँ, वह तुम्हारे आदमियों से छिपता हुआ वहाँ पहुँच जाता है। मैं तो उससे आजिज आ गई हूँ—" मेहर ने कहा।

"वह कौन है...कौन है वह शख्स, कौन है वह दुश्मन जिसकी मौत उसे यहाँ खींच लाती है ? कौन है वह मर्द का बच्चा जिसको मेरी तलवार का जरा भी डर नहीं—बता तू, वह कौन है ?—" बूढ़े अब्दुल्ला के शरीर में एकबारगी खून दौड़ गया। उसकी दृष्टि खूँटी से लटकती अपनी तलवार पर जा पड़ी और उसके हाथ तलवार की मूठ पकड़ने के लिये व्यग्र हो उठे।

"वह जहूर है अब्बा ! जुम्मन का बेटा !"

"जुम्मन का बेटा ! दुनियाँ में सबसे बड़ा दुश्मन ! दगाबाज, बदजात कहीं का ! उसकी इतनी मजाल कि तुझसे मुहब्बत करे" बुड्ढे ने कहा, क्रोध से उसके होठ फड़क रहे थे। उसका सारा शरीर आवेश से काँप रहा था !

"छोकरी !"—गरजा बुड्ढा—"मेरी बोतल ला..."

"बोतल !..." मेहर ने आशंकित होकर कहा। बुड्ढे का रंग-ढंग देखकर वह डर-सी गई। उसे भविष्य अन्धकारमय दीखने लगा। उफ ! बुड्ढा शराब पीकर न जाने क्या गजब ढाना चाहता है। कहीं जहूर और उसके बाप पर कोई आफत न आ जाय ?

"सुनती है या नहीं ?" बुड्ढा उबल पड़ा—"मेरी बोतल... मेरी तलवार ! दौड़ती जा बेटी ! तेजी से जा.. और हाँ सुन ! वही बोतल लाना, जो कल आई है—पगली कहीं की, इस कदर देख क्या रही है मेरे मुँह की ओर ? मेरे चेहरे पर कौन-सी लिखावट पढ़ रही है, बोल ?"

"अब्बा !...."

"खुदा का कहर !...तू मुझे बातों में भुलाना चाहती है। जा, जल्द जा। जरा मेरी पेटी भी लेती आना और घोड़े की जीन भी। आज कहर मचा दूँगा, कहर। जा—"

"मैं नहीं जाती अब्बा !"—मेहर ने बड़ी मुश्किल से कहा।

"नहीं जाती ?"—एकाएक गुस्से से बुड्ढे का सारा शरीर काँप उठा। वह दो कदम आगे बढ़ आया और मेहर के सामने आकर खड़ा हो गया। उसकी चौड़ी हथेली हवा में उठी और चट्ट से मेहर के रक्ताक्त गालों पर जा पड़ी। दर्द से मेहर चीख उठी। उसकी देदीप्यमान मुखाकृति म्लान पड़ गयी।

"अब भी जाती है या नहीं—काटकर रख दूँगा—"

मेहर की आँखों में आँसू छलछला आये। आज तक उसके अब्बा ने उसके प्रति एक भी अपशब्द नहीं कहा था, तमाचा मारना तो दूर रहा। वह धीरे-धीरे घर में गई और थोड़ी ही देर में एक हाथ में बोतल और दूसरे हाथ में तलवार लेकर लौट आयी।

"जब करेगी तो अधूरा काम। पेटी और जीन क्यों नहीं लाई? खुदा का कहर! तुझे कब ख्याल होगा?"

"हाथ तो दो ही थे अब्बा! चार चीज कैसे लाती?" कहते-कहते मेहर की आँखों से दो बूँद आँसू टपक कर जमीन पर आ रहे।

"यह क्या? आँसू निकल आये? बड़ी पगली है बेटी मेरी! तलवार लगती तो कैसे बरदाश्त करती—" मेहर की आँखों में आँसू देखकर बुड्ढा पिघल गया—"अच्छा यहाँ आ, सुन इधर.... घर में न जा...मत जा, मै कहता हूँ न!"

मेहर रुक गई। बुड्ढा आकर मेहर के सामने खड़ा हो गया। बोला—"जरा सी बात पर तू रूठ जाती है? मैं बूढ़ा हो गया हूँ न....ला तेरी आँखें पोंछ दूँ। उफ रे परवरदिगार! ये आँसू हैं या मोती की लड़ियाँ। इन मोतियों को क्यों बाहर निकालती है नादान कहीं की...."

"कहाँ चली?"

"पेटी और जीन लाने—" मेहर ने सिसकते हुए कहा।

"बड़ी पगली है तू। यहाँ आ, तू बैठ यहीं। हाँ बैठ जा!" बुड्ढे ने मेहर का कन्धा पकड़कर चारपाई पर बैठा दिया और अन्दर जाकर एक बरतन में कबूतर का शोरबा ला मेहर के सामने रख दिया—ले इसे चख कितना लजीज है। अभी ताजा ही बनाया है। मैं खुद ही पेटी और जीन ले आता हूँ।"

बुड्ढा भीतर जाकर पेटी और जीन उठा लाया। जीन को घोड़े की पीठ पर कसकर पेटी अपनी कमर में बाँध ली। तलवार पेटी मे लटका ली। बोतल अभी तक अछूती ही पड़ी थी। उसने उसका ढकन खोला और समूची शराब पेट में उड़ेल ली, एक बूँद भी न बची। तेज शराब कलेजे को जलाती हुई नीचे उतर गई। बुड्ढे के बदन में गर्मी आ गई।

"देख—" बूढ़ा घोड़े की पीठ पर हाथ रखकर मेहर से बोला—"मैं जा रहा हूँ, इन्तकाम लेने। जिसने—जिसके लड़के ने मेरी बेटी को तंग किया है, उसे काटकर यों फेंक दूँगा—" कहता हुआ बुड्ढा उछलकर घोड़े पर चढ़ बैठा।

"अब्बा!....तुम न जाओ मेरे अच्छे अब्बा! दुश्मन के कबीले में अकेले...."

"अकेले? यह देख मेरे दोनों हाथ, यह देख मेरी शमशीर और यह देख मुझको—बुड्ढा हो गया हूँ तो क्या, सैकड़ों जवानों को केले की तरह काट दूँगा। दुनियाँ में अकेला ही आया हूँ। और अकेले ही जाना है"—बुड्ढे ने घोड़े को एड़ लगाई। घोड़ा मालिक का संकेत पाकर तेजी से भाग चला। मेहर धड़कते हुए हृदय से सोचने लगी—या खुदा! अब क्या होगा?

इधर मेहर सोच रही थी और उधर से काली रात अपना भयानक रूप लेकर चली आ रही थी।

❀ ❀ ❀

"जहूर बेटा! खिड़की बन्द कर दे। ठंढी हवा आ रही है"—कहता हुआ जुम्मन दर्द से कराह उठा। आज चार दिनों से उसे बराबर बुखार आ रहा था। उसकी पीठ का घाव अच्छा होने का नाम नहीं लेता था।

"बन्द कर बेटा! क्या कर रहा है"—जुम्मन ने पुनः शिथिल स्वर में पुकारा।

"अब्बाजान!"—कहता हुआ जहूर झोपड़े के अन्दर आया। हाथ बढ़ाकर उसने खिड़की बन्द कर दी और मशाल की लौ तेज करता हुआ बोला—"अब्बा, रात होने को आई मगर अभी तक आपने एक दाना भी मुँह में नहीं रखा।"

"मेरी फिकर न कर बेटा! मैं बूढ़ा आदमी, रहूँ या न रहूँ—

कोई हर्ज नहीं। तू अब सयाना, लड़ने-भिड़ने लायक हो गया है। तुमपर अपने कबीले का सारा भार छोड़कर अब मैं राहेअदम को रवाना हो जाऊँगा। कौन जानता था कि यह पीठ का जख्म....और जख्म भी इतना बड़ा ? या खुदा !–शिकार में शेर का पीछा किया। शेर भिड़ गया मुझसे उसका पंजा मेरी पीठ पर इतने जोर बैठा.... उफ़ ! जहूर ! दर्द मुझे बेचैन किये है....मगर तू मेरी फिक्र छोड़कर दिनभर न जाने कहाँ गायब रहता है ? बताता भी नहीं कि आखिर तुझे ऐसा कौन-सा जरूरी काम...."

"ज्यादा न बोलिये अब्बाजान ! आपको तकलीफ हो रही होगी" जहूर ने बात बदलने के अभिप्राय में कहा। वह कैसे बता सकता था कि वह प्रेम की चोट से घायल हो चुका है और आसक्त बना हुआ आजकल दुश्मन की लड़की के पीछे घूमा करता है।

"तकलीफ की क्या बात है बेटे ! तकलीफ में ही तो हमारी जिन्दगी फूली-फली है। जिस शख्स ने तकलीफ नहीं उठाई, वह क्या जान सकेगा कि....हैं यह आवाज कैसी ? देख बेटे ! यह घोड़े की टाप की आवाज मालूम पड़ती है। इतनी तेज ! घोड़ा है या तूफान !"—उत्सुकता से बुड्ढा उठकर बैठ गया।

"आप लेटे रहें अब्बा ! कोई राही होगा—"

"राही नहीं बेटा ! सुन रहा हूँ घोड़े की टाप-कितनी तेजी के साथ पड़ रही है, कबीलेवालों में सिर्फ एकही आदमी इतनी तेज घोड़े की सवारी कर सकता है-सिर्फ वही !"

"वही कौन अब्बाजान ?"—जहूर को आश्चर्य हो रहा था।

"वही मेरा दुश्मन—बुड्ढा अब्दुल्ला ! सच मान बेटे ! सिर्फ वही इतनी तेज सवारी कर सकता है। मैंने उसकी सवारी देखी है—मालूम होता है, जैसे आंधी तूफान !...मगर वह इतनी रात गये यहाँ आया क्यों ? यह तो टाप की आवाज हमारे दरवाजे पर

आकर रुक गयी। मालूम होता है, वह यहीं उतरा है। देख तो बेटे! मेरे दुश्मन अब्दुल्ला को कोई तकलीफ तो नहीं है। याद रख, घर आये दुश्मन से दोस्ती का बर्ताव किया जाता है, जा, जल्द जा!" जुम्मन ने कहा।

जहूर के दिल में न जाने क्यों धड़कन पैदा होती जा रही थी। उसका हृदय आनेवाली विपत्ति का आभास पाकर घबड़ाने लगा था। वह उठा और धीरे-धीरे पाँव बढ़ाता हुआ झोपड़ी से बाहर आया। रात हो चुकी थी परन्तु उदय होते हुए चन्द्र का प्रकाश चारों ओर फैल चुका था। जहूर ने देखा-एक अश्वारोही घोड़े से उतर कर उसी की ओर बढ़ा आ रहा है, हाथ की नंगी तलवार चन्द्रमा के प्रकाश में बिजली-सी चमक रही है। जहूर ने पहचाना अश्वारोही अब्दुल्ला था। क्रोध से काँपता हुआ आगे बढ़ा आ रहा था वह।

"कहाँ है? कहाँ है वह जुम्मन?"—अब्दुल्ला की तेज आवाज गूँज उठी।

"क्या है मेरे बुजुर्ग?"—जहूर ने शान्तिपूर्वक पूछा।

"क्या है? इतने अनजान बनते हो?"—बुड्ढा अब्दुल्ला गरज उठा—"चोरी और सीना-जोरी! इतने दिनों बाद आज मौका मिला है। सालों की प्यासी मेरी तलवार आज ताजे खून से अपनी प्यास बुझाने आई है....बुला! कहाँ है जुम्मन?"

"वे जख्मी होकर..."

"जख्मी होकर! बहाना करता है? बहादुरी में धब्बा लगाता है। जा उससे कह दे, आज अब्दुल्ला अपना बदला चुकाने आया है, उसके कलेजे में अपनी तलवार रखने आया है और उसके सर को अपने हाथ में लेने आया है। जा जल्द जा!" अब्दुल्ला का क्रोध चरम सीमा तक पहुँच गया था—"तू जाता है

या नहीं—कि मैं ही जाकर झोपड़ी में से उसे घसीट लाऊँ.... छोकरा कहीं का !....और सुन, इतने धीरे-धीरे जा रहा है, मानों पैर हैं ही नहीं। पर लगा कर जा, उड़ जा तेजी से।"

जहूर धीरे से झोपड़ी के भीतर घुसा। जुम्मन ने उसके मुँह पर चिन्ता की रेखा देखकर पूछा—"वह क्या कह रहा है बेटे ! क्या कोई कड़ी बात...."

"अब्बाजान ! वह अपना बदला लेने आया है—"

"बदला ?" जुम्मन की भवें तन गयी—"बदला ! वह बदला लेने आया है—मुझसे ? बुड्ढा कहीं का—" जुम्मन क्रोधित हो उठा—"अच्छा ठीक है बेटे, मेरी तलवार दे और हाँ, उसके पास तलवार है या नहीं ? न हो तो एक उसको भी दे आ।"

"मगर अब्बाजान ! ऐसी हालत में...."

"तू कैसी बात कर रहा है ? चुपचाप तमाशा देख"—जुम्मन लड़खड़ाते पैरों से उठा, खूँटी से लटकती हुई अपनी तलवार ली और झोपड़ी के बाहर आ रहा। पीठ के घाव से रक्तस्राव होने लगा।

"आ गये मेरे जईफ दोस्त ! मेरी तलवार को, अपना खून चखाने"—जुम्मन ने कहा।

"आ गया कुत्ते ! ले अब देख बुड्ढे का हौसला। बुला जितने तेरे आदमी हों..."

"आदमी बुलाने की क्या जरूरत है ? तुम अकेले ही आये हो न ? आ जाओ ! यह लो"—विद्युत वेग से दोनों प्रतिद्वन्द्वियों की तलवारें आपस में जा मिलीं। झन्न का शब्द हुआ जोरों से।

"अपना सर बचा कर वार करना मेरे दोस्त !"—कहते हुए जुम्मन ने अपनी तलवार का भरपूर वार किया।

अब्दुल्ला कम होशियार नहीं था। बराबर की लड़ाई होने लगी। तलवार की झनझनाहट से दिशायें गूँज उठीं जुम्मन के

कबीले के कई आदमी घटनास्थल पर आकर, दोनों प्रतिद्वन्दियों की वीरता देखने लगे। जुम्मन जख्मी था—फिर भी यथाशक्ति अब्दुल्ला का उत्तर-प्रत्युत्तर दे रहा था।

"जुम्मन! मैदानेजंग में अब्दुल्ला की तलवार ठीक निशाने पर लगती है! यह लो!" बिजली की तरह अब्दुल्ला की तलवार जुम्मन के कलेजे की ओर बढ़ी।

जुम्मन को सम्हालने का मौका भी न मिला। जोरों की एक चीख के साथ अभागा जुम्मन जमीन पर लेट गया।

"खबरदार! तलवार म्यान के बाहर ही रहे। बाप को मारकर बेटे से बचकर नहीं जाओगे।"—जहूर ने अपनी तलवार खींच ली।

"तू छोकरा पागल हो गया है क्या। बाप की तरह तू भी कजा के अजल का शिकार बनना चाहता है? शाबास छोकरे! मैं तेरे हिम्मत की कद्र करता हूँ। आ बेटे तू भी अपना हौसला देख ले"—कहते-कहते अब्दुल्ला की तलवार हवा में नाच उठी। जल्द ही तलवारों के चलने की आवाज चारों ओर गूँजने लगी।

"शाबास बेटे! खूब वार करता है"—जहूर का कौशल देखकर बुड्ढे अब्दुल्ला को आश्चर्य हो रहा था।

"तुमने मुझसे तलवारबाजी करके बड़ी भूल की है मेरे बुजुर्ग! अब तुम्हारा बचना गैर-मुमकिन है"—जहूर की तलवार तेजी से नाच रही थी।

"यह तो खेल रहा हूँ छोकरे! नहीं तो तुझे मारते कौन देर! अच्छा तो सम्हल..." अब्दुल्ला की तलवार लपकी जहूर की ओर! थोड़ी ही देर में उसका सर हवा में उड़ता हुआ नजर आता परन्तु शीघ्र उसकी तलवार अब्दुल्ला की तलवार से जा भिड़ी। वार बचा लिया गया।

"छोकरा है या आफत !"—अब्दुल्ला के मुँह से हठात् ये आश्चर्यमिश्रित शब्द निकल पड़े।

"अब तुम बचना मेरे बुजुर्ग दुश्मन !"—जहूर की तलवार चन्द्रमा के प्रकाश में चमक उठी। उसी समय अब्दुल्ला का हाथ काँप गया। तलवार छूटकर जमीन पर गिर पड़ी। देर तक लड़ते रहने के कारण वह काफी थक चुका था। जहूर की तलवार उसके सर को लक्ष्य करती हुई तेजी से चल रही थी। बुड्ढा मौत के समीप था।

"यह देख बेटे !" कहता हुआ अब्दुल्ला पैतरे से दूसरी ओर जा रहा। जहूर की तलवार हवा को चीरती हुई जमीन पर आ गिरी। कड़ा झटका लगा। जहूर मुँह के बल जमीन पर आ रहा।

अब्दुल्ला ने आगे बढ़कर जहूर की पसली में जोरों की एक लात मारी—बेचारा नौजवान बेहोश गया। जब तक की उसके कबीले वाले सम्हलें, तब तक आफत के परकाले अब्दुल्ला ने बेहोश जहूर को उठाकर अपने घोड़े पर लाद लिया और आप भी उसी पर चढ़ बैठा।

निमेष-मात्र में चन्द्रमा के प्रकाश से दूर, पेड़ों की सघन पंक्तियों में जाकर वह अदृश्य हो गया।

● ●

"सावधान ! कौन आता है ?"—प्रहरी का तीव्र स्वर अँधेरी रात में दूर तक गूँज उठा।

वह आदमी जिसकी धुँधली परछाईं देखकर प्रहरी ने यह आवाज दी, एक क्षण ठिठका फिर कुछ सोचकर आगे बढ़ा।

"होशियार ! आगे पैर रखकर अपनी मौत न बुलाओ—"

प्रहरी पुनः गरज उठा। उसके हाथ की भारी बन्दूक अपने लक्ष्य के लिये तैयार हो गई। उसके साथी भी, जो उसके पास ही पड़े हुए आराम से खर्राटे भर रहे थे, आवाज सुनकर उठ बैठे।

"वह देखो ! अँधेरे में कोई खड़ा है, पता नहीं कौन है"—उसने उत्तर दिया।

आनेवाला आदमी पुनः धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगा। सब प्रहरी चौकन्ने हो गये। एक पंक्ति में खड़े होकर उन्होंने अपनी-बन्दूकें ऊँची की।

"आखिरी बार पूछा जाता है—दोस्त या दुश्मन ? हमारी बन्दूकें तैयार हैं"—एक पहरेदार ने फिर ऊँचे स्वर में कहा।

आनेवाला आदमी अब तक समीप आ चुका था। प्रहरियों का अन्तिम आदेश सुनकर वह फिर ठिठक गया। उसका हाथ बगल की जेब में गया। दूसरे ही क्षण उसकी हथेली पर कोई चीज अन्धेरी रात में जुगनू-सी चमक उठी।

"हैं ! वजीरेआजम ? इस अन्धेरी रात में—यहाँ ?"—अकस्मात प्रहरियों के मुँह से आश्चर्यसूचक स्वर निकल पड़े। उनकी उठी हुई बन्दूकें नीची हो गईं। सबों ने आने वाले को तीन बार झुककर अभिवादन किया—फिर पंक्तिबद्ध होकर प्रस्तर-मूर्ति के सदृश्य खड़े हो गये—ठीक सामने की ओर देखते हुए।

वह प्रहरियों के सामने आकर रुक गया। पास ही एक मशाल जल रही थी, जिससे आनेवाले की आकृति कुछ और स्पष्ट हो गई।

पचास वर्ष से ऊपर की उम्र में भी उसकी आँखों में अभी तक तेज विद्यमान था। उसकी लम्बी दाढ़ी अभी तक पूर्णरूपेण सफेद नहीं हुई थी। ऊपर से एक काला लबादा पहने रहने के कारण यह नहीं प्रकट होता था कि उसके शरीर पर कैसे वस्त्र हैं।

"शाहंशाह इस वक्त कहाँ हैं ?"—आनेवाले ने, जो कि सल्तनत काशगर का वजीर था, पूछा।

"ख्वाबगाह में आराम फरमा रहे हैं"—एक प्रहरी ने तीन बार फिर अभिवादन करते हुए कहा।

"साथ में कौन है ?"

"साथ में कोई नहीं, सिर्फ तीन बाँदियाँ हैं !"

"मुझे बहुत जरूरी काम से सुलतान से इसी वक्त मिलना है। देर होने से मुमकिन है बहुत बड़ा नुकसान हो जाय। तुम भीतर की ड्योढ़ी पर जाकर कहो, मैं इसी वक्त सुल्तान से भेंट करूँगा"—वजीर ने कहा। उसके चेहरे से व्यग्रता टपक रही थी।

प्रहरी अभिवादन कर भीतर चला गया। वजीर आकुलता से इधर-उधर टहलने लगा।

थोड़ी ही देर में प्रहरी वापस लौट आया और अभिवादन कर बोला—"आप जा सकते हैं !"

झपटता हुआ वजीर भीतर चला गया। अन्दर सात फाटक मिले। किसी पर पहरेदारों का पहरा था और किसी पर ख्वाजा-सरों का। आखिरी फाटक पर सुन्दर बाँदियाँ पहरा दिया करती थीं। वजीर को ऐसे समय में आया देख, बाँदियों के आश्चर्य की सीमा न रही। वजीर उनसे कुछ न बोला। पास ही रेशम की एक पतली डोर लटक रही थी—वजीर ने धीरे से वह डोर दो बार खींची और प्रत्युत्तर के लिये चुपचाप खड़ा हो गया।

❀ ❀ ❀

धन की भी कहीं सीमा होती है ? शाही महल में जिधर देखो, उधर धन का ही खेल दिखाई पड़ता है। देखकर यह जानने का कौतूहल होता है कि क्या स्वर्ग में भी, इस शाही महल के स्वर्ग से बढ़कर आराम होगा ?

सुलतान काशगर के ख्वाबगाह का क्या पूछना? जन्नत की हूरों का भी वैसे ख्वाबगाह नसीब न होते होंगे। ऐसा है उनका ख्वाबगाह!

रंग-बिरंगी चित्रकारी, बड़े बड़े मोमी शमादान, बहुमूल्य कालीनें, गंगा-जमुनी सुराहियों में भरा हुआ शरबते-अनार, रत्न-जटित प्याले और मनोरन्जन के लिये सुन्दर बाँदियाँ—इतनी सुन्दर की जन्नत की हूरें!

ओह! सुलतान का जीवन भी कितना विलासमय है?

इस समय सुलतान काशगर अपने ख्वाबगाह में एक रत्न-जटित पलंग पर लेटे हुये आराम कर रहे हैं। संसार की अथवा सल्तनत की उन्हें कोई चिन्ता नहीं, परन्तु उनकी सुन्दर मुखाकृति, काली काली ऐंठी हुई मूंछे, बड़े-बड़े नेत्र-द्वय, उन्नत ललाट, उनकी अप्रकट प्रतिभा के अवश्य साक्षी हैं। उम्र लगभग सत्ताइस साल की है, लेकिन इतनी कम उम्र में ही उन्होंने राज्य का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया है। रियाया उनसे बहुत प्रसन्न रहती है।

सुलतान के पास ही पलंग पर तीन सुन्दर युवतियाँ लेटी हुई हैं। सुलतान की तरह उन्हें भी आसपास की कोई चिन्ता नहीं है। उनके वस्त्र अस्तव्यस्त हो गये हैं फिर भी वे आराम से खर्राटें ले रही हैं।

पलग के पास ही चाँदी की चौकी पर सुराही और प्याला रखा हुआ है, जिससे मालूम होता है कि सोने के पहले वहाँ शरबते-अनार का भी दौर-दौरा था, यही सबब है कि सुलतान और छोकरियाँ इस तरह बेसुध और चिन्तारहित होकर सो रही हैं। ख्वाबगाह के एक कोने में पीतल का एक छोटा-सा घण्टा भी टगा हुआ है, जिसकी चमक सोने जैसी है।

घण्टा हिला। टन-टन का शब्द हुआ। फिर हिला, फिर शब्द हुआ—टन टन !!

"घण्टे की आवाज !" कहते हुए सुलतान काशगर हड़बड़ा कर उठ बैठे। उनकी दृष्टि तत्क्षण कोने में हिलते हुए घण्टे पर जा पड़ी। घण्टा अभी तक हिल रहा था। उसकी आवाज अभी तक ख्वाबगाह में गूंज रही थी।

सुलतान ने शीघ्रता से तीनों युवतियों को जगाया। सुलतान की आँखों में आश्चर्य का भाव देखकर उनका सुख-स्वप्न भंग हो गया और वे सोने की अवस्था में ही उठकर खड़ी हो गयीं !

"अपने कपड़े सम्हाल लो और दरवाजा खोल दो—वजीर आजम इस बेवक्त मिलने आए हैं। कोई पेचीदा मामला जान पड़ता है—जल्दी करो !" सुलतान ने गम्भीर स्वर में कहा। उनके ललाट पर आकुलता के चिन्ह अंकित थे। उन्हें आश्चर्य हो रहा था कि इतनी रात गए वजीर क्यों आया है उनके पास ?

वजीर के अतिरिक्त और किसी को भी सुलतान से असमय में मिलने की आज्ञा न थी।

युवतियों ने अपने अस्तव्यस्त कपड़ों को यथास्थान कर लिया। एक ने सुलतान का शाही चुगा लाकर उन्हें पहना दिया, दूसरी ने वजीर के लिए एक चाँदी की कुर्सी लाकर रख दी और तीसरी ने आगे बढ़कर मुख्य द्वार धीरे से खोल दिया !

घबड़ाहट की अवस्था में वजीर अन्दर घुसा और सुलतान को अभिवादन किया। युवतियाँ श्रेणीबद्ध होकर, शान्त हो चुपचाप खड़ी हो गईं।

"इतनी रात को तुमने तकलीफ की ! आखिर तुम्हारी सूरत से इतनी परेशानी क्यों झलक रही है ?"—सुलतान ने प्रश्न किया।

"जहाँपनाह! बात बड़ी खौफनाक है—" वजीर ने उत्तर दिया।

"जाओ—" सुलतान ने उन युवतियों को आदेश दिया और गाव तकिये के सहारे उठँग गये—"हाँ बोलो! आखिर किस बात ने तुम्हें इतना परेशान कर रखा है? मुझे भी सख्त ताज्जुब हो रहा है कि तुम...."

"बात बड़े हैरत की है शाहंशाह! मैं वजीर हूँ, अदना वजीर! और आप हैं दीन दुनियाँ के मालिक—मैं किस मुँह से वह हैरतअंगेज दास्तान आपको सुनाऊँ? डर है मुझे—कहीं वह बात कहकर मैं खुद सुलतान के गुस्से का शिकार न हो जाऊँ। फिर भी जहाँपनाह यकीन रखें—अगर मेरे खून का एक-एक कतरा, मेरे माँस का एक-एक जर्रा भी आपके काम आ सके, तो मैं जाँ-निसारी के लिये तहेदिल से तैयार रहूँगा। आप...." वजीर ने अस्फुट स्वर में कहा।

उसका शरीर भय से काँप रहा था। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह सुलतान के आगे किस तरह से, किस साहस से वह भयानक बात कहे, जिसे कहने के लिये वह इतनी रात गए वहाँ आया है।

"बात क्या है मेरे वजीर! साफ-साफ कहो तुम। मैं सब सुनने को तैयार हूं। कहर से अलफाज भी मुझे मायूस नहीं कर सकेंगे। तुम कहो—दिल खोल कर कहो—" सुलतान ने वजीर को सान्त्वना दी। उनकी भी उत्सुकता बढ़ती जा रही थी।

"किस मुँह से कहूँ शाहंशाह! आस्माँ फट पड़ेगा, जमीं पर कहर मच जायगा, चाँद और तारे आसमान से टूट पड़ेंगे। मगर जहाँपनाह। सब कुछ कह दूँगा—सारा राज फाश कर दूँगा। आज तक अपनी बुड्ढी आँखों से महल में जो-जो तमाशे देखे

सब कुछ अब तक देखता रहा मगर अब चुप न रहूँगा....सुनिए शाहंशाह !—"

एक बार वज़ीर का शरीर रोमांचित होकर काँप उठा, उस समय उसकी अवस्था पागलों जैसी हो रही थी।

परन्तु वह कहता ही गया—"उफ ! फरिश्ते जैसे खाविन्द को छोड़कर जो बेगम, जो मलका बुरे रास्ते पर पैर रखे, बदकारी पर जाय—कहर मच जायगा..."

वज़ीर की अन्तिम बात से सुलतान चौंक पड़े—"वज़ीर ! बात क्या है ? जल्द बोलो, तुमने तूफान-सा मचा दिया है मेरे दिल में ! मेरा वक्त जाया न करो। साफ-साफ बोलो मेरे जईफ वज़ीर !"

"मेरे मालिक ! मेरे आका !"—वज़ीर हाँफते हुए बोला—"मेरा कसूर मुआफ करेंगे। मगर आप वह बात सुनकर अपने दिल पर काबू न रख सकेंगे जहाँपनाह !....या इलाही ! या खुदा ! मुझे कहने की हिम्मत दे, शाहंशाह को सुनने की ताकत दे..."

"वजीर !..." एकाएक सुलतान का स्वर कठोर हो गया। उनकी मुखाकृति पर क्रोध की लाली दौड़ गई !

"गुस्सा न कीजिये मेरे आका !" कहते-कहते बुड्ढा वज़ीर धड़ाम से सुलतान के पैरों पर गिर पड़ा।

"इतने रजीदा न बनो मेरे बुजुर्ग ! दिल को काबू में रखो और बोलो ! कहो !"—सुलतान की आवाज में मुलायमियत से ज्यादा कड़ाई थी।

"शाहंशाह ! दीन दुनिया के मालिक ! सुनिये, मलकए आलम की काली करतूत !"

"मलकए आलम की काली करतूत ? वज़ीर ! यह तुम क्या कह रहे हो ?"

"ठीक कह रहा हूँ जहाँपनाह ! आप यहाँ रंग महल में मौज

उड़ा रहे हैं और उधर अपने महल में मल्कये आलम भी एक खानुमा गुलाम के साथ..."

"गुलाम के साथ! यह तुम क्या कह रहे हो वज़ीर? तुम्हें अपने सर की परवाह है या नहीं? मल्कये आलम पर..." सुल्तान गुस्से से काँपने लगे।

"मैं सबूत भी दे सकता हूँ शाहंशाह!"

"सबूत?....तुम सबूत भी दे सकते हो? और उसके लिलाफ—जो दीन दुनिया के मालिक सुल्तान, काशगर के दिल की रानी है—उसकी करतूतों को तुम साबित कर सकते हो?...या खुदा! कहनेवाली ज़बान में आग क्यों न लग गई? सुनने वाले के कान बहरे क्यों न हो गये?" सुल्तान का सर एक ओर को लटक गया। शायद उन्हें गश आ गया था?

"जहाँपनाह..."

"मैं!"—सुल्तान की तबीयत धीरे-धीरे ठीक हो गई—"मैं सबूत चाहता हूँ। चलो मैं मल्कए आलम के महल तक चलता हूँ। वहाँ अगर तुम्हारी बातों का पूरा सबूत न मिला तो मेरी तलवार और तुम्हारा सर!"—सुलतान ने अपनी तलवार कमर से लटकाते हुये कहा।

"हुजूर किस रास्ते से चलेंगे?"

"छिपे रास्ते से....तुम मेरे पीछे-पीछे आओ—" कहते हुए सुल्तान ने पास ही लगी हुई चाँदी की एक मूठ धीरे से घुमा दी।

मूठ घुमाते ही दीवाल में थोड़ा-सा कम्पन हुआ और एक मनुष्य के जाने योग्य दरार हो गयी। सुलतान और वज़ीर क्रमशः उस दरार में घुस गये। उसके भीतर प्रवेश करते ही वह दिवाल पुनः आपस में जा सटी और वह स्थान पूर्ववत् बिलकुल साफ दिखलाई देने लगा।

❀ ❀ ❀ ❀

एक हृदयग्राही विशाल उद्यान है, जिसमें रंग-बिरंगे फूल खिलकर हवा में अपनी सुगन्ध फैला रहे हैं। स्थान-स्थान पर संगमरमर के फौव्वारे बने हुए हैं, जिनसे इस आधी रात के समय में भी पानी की फुहार उठ रही है।

चन्द्रमा की ज्योत्सना में उद्यान की शोभा दर्शनीय है। उद्यान के मध्य भाग में एक छोटा-सा महल बना हुआ है। छोटा होने पर भी यह महल अपनी जोड़ का एक ही है। सुन्दर गुमटियाँ बनी हुई हैं। गुमटियाँ चतुर्दिक से लताओं द्वारा आच्छादित हैं। लताओं के घनीभूत होने के कारण यहाँ कोई सहज ही अपने को छिपा सकता है।

वज़ीर और सुलतान ने इसी स्थान से सब कुछ छिपकर देखने का निश्चय किया।

"गौर से देखिये हजूर! वह दोनों हैं—मलकये आलम और वह गुलाम"—वज़ीर ने सुलतान के कान के पास मुँह सटाकर कहा।

सुलतान लताओं को इधर-उधर हटाकर इतस्ततः देखने लगे—"मुझे तो कुछ दिखाई नहीं पड़ता।" उन्होंने थोड़ी देर के बाद कहा।

"कुछ दिखाई नहीं पड़ता?"—वज़ीर साश्चर्य बोला—"या इलाही! मेरी ज़ईफ आँखों से भी आपकी आँखें कमजोर हैं? अच्छा, और नजदीक से चलकर देखिये।"

वज़ीर और सुलतान पेड़ों की ओट देते हुए आगे बढ़े। एक पेड़ के नीचे पहुँचते ही सुलतान ठिठके।

उन्होंने देखा! साफ चाँदनी में, दूध से धोई हुई रात में, अपने दिल की रानी मलकये-आलम का कपट व्यवहार, कुत्सित प्रेम-लीला।

उन्होंने देखा—जलती हुई आँखों से, धधकते हुए हृदय से

और खौलते हुए खून से, विश्वासघात का वह दृश्य जिसकी सीमा असीम है। मल्का अपने प्रेमी के साथ स्फटिक शिला पर बैठकर प्रेमालाप में इतनी तल्लीन थी कि उन्हें अपने अस्त-व्यस्त कपड़ों का तनिक भी ध्यान न था। प्रेमी युवक क्षुद्र अनुचर मात्र था। इतनी बड़ी सल्तनत के अधिपति सुलतान को छोड़कर मल्का ने उस क्षुद्र गुलाम के हाथ अपनी प्रतिष्ठा, अपनी मर्यादा और अपने सतीत्व का क्रय-विक्रय किया था। विश्वासघात का इससे बढ़कर और क्या उदाहरण हो सकता है?

स्थिर-प्रस्तरवत नेत्रों से सुलतान सब कुछ देख रहे थे। क्रोध से शरीर काँप रहा था और हाथ तलवार की मूठ पर था। थोड़ी देर तक सुलतान उनकी क्षण-क्षण पर परिवर्तित होने वाली लीलाओं को खड़े देखते रहे। सुलतान की जगह यदि कोई दूसरा मनुष्य होता तो वह कदापि इस तरह चुपचाप वह दृश्य नहीं देख सकता था। वह क्रोधावेश में या तो मूर्छित होकर गिर पड़ता या दोनों का सर धड़ से अलग कर देता।

परन्तु सुलतान तो सुलतान थे—एक विशाल राज्य के अधिपति साधारण मनुष्य और उनमें बहुत अन्तर था। उन्होंने सब कुछ शान्तचित्त से देखा। फिर एकाएक घूम पड़े। उनके मुँह से निकला—

"तुम्हारा सर बच गया मेरे बुजुर्ग! वाकई तुम्हारा कहना ठीक था।"

ऊपर से सुलतान चाहे कितने भी शान्त और गम्भीर दीख पड़ते हों, परन्तु उनकी आन्तरिक अवस्था अत्यन्त शोचनीय थी। उनके हृदय में दारुण ज्वाला धधक रही थी। औरतों के प्रेम में छिपी हुई वासनामय प्रवृत्ति और उनके दुर्गम चरित्र को देखकर उन्हें बड़ी ही ग्लानि हो रही थी।

"तुम शाहजादे परवेज के महल में चले जाओ—इसी वक्त, और उसे जल्द से जल्द साथ लेकर मेरे पास आओ। मैं महल में

जा रहा हूँ"—सुलतान ने कहा । वजीर, शाहजादा परवेज को बुलाने चला ।

सुलतान पलंग पर आकर अन्यमनस्क भाव से पड़ रहे । प्रतिक्षण उठते हुए विचारों ने उनके मस्तिष्क को उद्विग्न कर रखा था। लाख प्रयत्न करने पर भी उन्हें शान्ति नहीं मिल रही थी । घबड़ाहट की अवस्था में वे कभी-कभी बड़बड़ाने लगते—कभी करवट बदलते और कभी हृदय के अन्तर्प्रदेश से एक निश्वास छोड़कर अपनी आत्मा को सान्त्वना देने का असफल प्रयत्न करते । अब तक तीनों युवतियाँ वहाँ आ चुकी थीं। उनमें से एक ने उनके चेहरे पर वेदमुश्क छिड़कना आरम्भ किया। वेदमुश्क की शीतलता ने उन्हें कुछ राहत दी।

"शरबते अनार !"—सुलतान का इशारा पाकर एक बांदी ने प्याले में थोड़ी-सी शराब ढालकर सुलतान के होठों से लगा दिया । सुलतान गट्ट-गट्ट मदिरा एक सांस में ही पी गये। फिर वह प्याला उस युवती से छीनकर उसकी छाती पर इतने जोरों से खींच कर मारा कि बेचारी चीख उठी ।

"साकी ! शराब ! औरत..." सुलतान की आवाज काँप रही थी—औरत । फाहशा दगाबाज ! चली जाओ तुम सब यहाँ से ।"

और सुलतान ने अपना सर थाम लिया ।

"सुलतान की हालत एकाएक ऐसी क्यों हो गई ?" एक ने दबी जबान से दूसरी युवती से पूछा ।

"जरूर कोई नयी बात हुई है"—दूसरी ने कहा और तीनों युवतियाँ थर-थर काँपती हुई प्रकोष्ठ से बाहर हो गईं ।

"जिल्ले सुब्हानी !"—एकाएक दरवाजे पर से आवाज आई।

सुलतान ने सर उठाकर देखा—

दरवाजे पर वजीर के साथ मुस्कराता हुआ परवेज खड़ा था।

"तुम आ गये जीनते-ताज शाहनी !"—सुलतान ने कहा—"आओ बैठो !"

परवेज आकर सुलतान के पलंग पर बैठ गया और बोला—"भाईजान ! इस बेवक्त कौन-सी जरूरत आ पड़ी, जिसके लिए मुझे बुलाने की तकलीफ उठाई आपने ?"

"परवेज !"—शाहंशाह कहने लगे—"मुझे एक पेचीदा मामले में तुमसे मशविरा करना है। तुम मेरे भाई हो। मुझे उम्मीद है कि तुम मेरे कहने को, मेरे हुक्म को लफ्ज-ब-लफ्ज बजा लाओगे। यों तो मैं वह काम किसी और के भी सुपुर्द कर सकता था मगर वह अपनी बदनामी...."

"आखिर बात क्या है आलीजाह ?"—परवेज ने पूछा। उसकी आँखों से उत्सुकता टपक रही थी।

"बात ?—क्या वजीर ने आज की दास्तान तुम्हें नहीं सुनाई ?"

"नहीं जहांपनाह ! मैंने शाहजादे से वह शर्मनाक बात अपनी जबान से कहना मुनासिब नहीं समझा"—वजीर ने अभिवादन करते हुए कहा।

"मरहबा मेरे जईफ वजीर !"—सुलतान के चेहरे पर एक हल्की मुस्कुराहट खेल गयी—"परवेज ! खुदा की दी पाक इज्जत पर जो बदनामी का धब्बा लगाये, उसके लिए—उस बदनसीब के लिये तुम कौन-सी सजा तजवीज करते हो ?"

"भाईजान ! इज्जत और अस्मत—ये दोनों चीजें जिस शख्स ने गँवा दीं, उसके लिये इस तख्तए-दुनियाँ से नेस्तनाबूद हो जाना ही बेहतर है"—परवेज ने कहा।

"आफरीं शाहजादे !" सुलतान के मुँह से शाबासी के अलफाज निकल पड़े—"तुमने बहुत ठीक जवाब दिया। मगर मैं उस शख्स को सिर्फ शहर से निकल जाने की सजा देता हूँ।"

"वह शख्स है कौन भाईजान ?"

"सुनो !"—सुलतान की आकृति गम्भीर हो गई। कठोर स्वर में वे कहते गये—"मल्का, जिसे तुम अब तक इज्जतो अस्मत की हूर समझते थे—फाहशा है, फाहशा ! समझे....मैं तुम्हें हुक्म देता हूँ कि तुम सुबह होते ही किसी बहाने उसे खौफनाक जंगल में ले जाकर छोड़ दो। इस तरह छोड़ दो कि उसकी छाया तक का भी पता न लग सके कभी।"

"भाईजान !"—आश्चर्य-मुद्रा से परवेज उठ खड़ा हुआ—"मल्काए-आलम फाहशा ! यह कभी नहीं हो सकता भाई जान ! आपका ख्याल गलत है।"

"मेरा ख्याल ठीक है !" सुलतान सक्रोध बोले—"कान से सुनी हुई बात गलत हो सकती है शाहजादे ! परन्तु जिसकी बदअतवारी मैं खुद अपनी निगाहों से देख चुका हूँ, उसकी सिफारिश करना फजूल है। मेरा हुक्म है, शाही हुक्म, सुलतान का हुक्म—कि तुम मल्का को ले जाकर ऐसी जगह छोड़ दो, जहाँ पीने को पानी और खाने को दाना भी न मिले। दुनियाँवाले दी हुई सजा का नतीजा सुनकर कानों पर हाथ धर लें। जमीनों-आसमान काँप उठे....हा-हा !"—सुलतान का विकट हास्य भयानक रूप में गूँज उठा—"मेरी हुकूमत के आसमान पर सितारों का ऐसा उलट फेर ? कभी नहीं,। जाओ, अभी जाओ !"

"मेरे आका ! शाहंशाह ! रहम-रहम !" वजीर आर्तनाद कर उठा।

"कभी नहीं"—शाहंशाह गरज उठे—"जाओ तुम लोग ; मुझे आराम की जरूरत है।"

वजीर और परवेज थर-थर काँपते हुए चले गये।

उनके जाते ही शाहंशाह चिल्ला उठे-"अँगूरी ! शरबते अनार ! शराब ! साकी !"

तीनों युवतियाँ तुरन्त वहाँ पहुँचीं। एक ने शराब का प्याला

भर कर काँपते हुए हाथों से सुलतान के होठों से लगा दिया। सुलतान एक ही साँस में उसे पी गये।

तीसरा, चौथा और फिर पाँचवा—

सुलतान शराब पीते गये और दीनदुनियाँ की सुध भूलते गये।

इसी समय कोने में लटकता हुआ घंटा बज उठा जोरों से।

"हैं! किसने पुकारा ?"—अर्ध-मूर्छितावस्था में झूमते हुए सुलतान दरवाजे की ओर बढ़े। तीनों सुन्दरियाँ विस्फारित नेत्रों से सुलतान के अव्यवस्थित कार्यों को देख रही थीं।

* * *

सुनसान भयानक जंगल ! इतना बीहड़ कि दिन में भी मार्ग चलना कभी-कभी कठिन हो जाता है। ऐसे ही भयानक जंगल की पगडण्डी से दो प्राणी–एक पुरुष, एक स्त्री शीघ्रता से अपना रास्ता तय करते जा रहे हैं। दोनों के वस्त्रादि राजकीय हैं, जिससे मालूम होता है कि उन दोनों का शाही खानदान से अवश्य कुछ सम्बन्ध है।

"मैं तो अब थक गई परवेज !"–औरत कहने लगी "तुम न जाने कहाँ जंगल-जंगल मुझे घुमा रहे हो। कुछ मुँह से बोलते भी नहीं। देखती हूँ, तुम्हारा चेहरा जर्द है, आँखें खुश्क हैं–आखिर इसकी वजह क्या है ?"

"मल्कए आलम !"–परवेज ने कहा—"खुदा की पनाह ! आज कहर होने वाला मालूम देता है। उफ ! मैं क्या करूँ मल्का ! आइये इस साफ चट्टान पर बैठकर सुस्ता लीजिये। अभी हमें बहुत बड़ी मंजिल तय करनी है। सुलतान ने कहा है कि उसे ऐसी जगह छोड़ना, जहाँ पीने को पानी और खाने को दाना भी न मिले।"

"तुम्हारा मतलब क्या है शाहजादे !"—मल्का की मुखाकृति म्लान होती जा रही थी।

"मेरा मतलब बहुत साफ है मल्का ! शाहंशाह आपकी सारी बेवफाई से वाकिफ हो चुके हैं। आपका सारा राज फाश हो गया है। मुझे आपको शहर-बदर करने का हुक्म हुआ है—"

"या रब ! यह मैंने क्या सुना ?" मल्का अपनी अवस्था पर विचार कर रो पड़ी—"परवेज ! माना कि मैं कसूरवार हूँ मगर सुलतान भी तो कम कसूरवार नहीं हैं ? रात-दिन नई-नई छोकरियों की जवानी के साथ अठखेलियाँ करना और मुझसे दूर रहना—क्या तुम्हारी निगाह में ठीक है ? मैं औरत हूँ परवेज ! मेरे पास भी दिल है, मेरे दिल में भी अरमान हैं...."

"मल्का ! बादशाह की जिन्दगी ऐशो-इशरत परस्त होती है किसकी मजाल कि सुल्तान के आगे सर उठा सके ? वे दीन-दुनिया के मालिक हैं, किसमें इतनी हिम्मत है कि उनकी कार-गुजारी में दखल दे सके ? मगर सच कहूँगा मल्का आप से अच्छी हालत में तो उन गरीबों की औरतें हैं जो...."

"ठीक कहते हो शाहजादे ! शाहंशाह की मल्का होना किस्मतकी बदनसीबी ही है—" मल्का ने कहा।

थोड़ी देर तक सन्नाटा रहा, तत्पश्चात् परवेज कहने लगा—"मुझे सख्त अफसोस है मल्कयेआलम ! मगर क्या करूँ, शाही हुक्म से लाचार हूँ।"

"आजकल सुलतान शराब और साकी के पीछे दीवाने हो रहे हैं। उन्हें सल्तनत की खबर ही नहीं। सारे सल्तनत की हालत अबतर हो रही है ! अपनी हालत पर गौर करो, तुम सुलतान के भाई हो—सगे भाई—मगर हो तुम एक गुलाम से भी बदतर। तुम्हें कुछ खर्च मिल जाता है, उसी पर तुम गुजर करते हो और उधर शाहंशाह दरियाये-शराब में तैरते हुए ऐश करते हैं, अगर यही हालत रही तो थोड़े दिनों में सल्तनत खाक में मिल जायगी।"

परवेज के हृदय पर मल्का की बातों ने पर्याप्त प्रभाव डाला, वह बोला—"मल्का ! मैं इन सारी बातों को बहुत पहले ही से सोचता चला आ रहा हूँ। सोचता हूँ कि...."

"सोचना ही चाहिये शाहजादे ! तुम दोनों भाई हो, फिर सुलतान को क्या हक़ है कि वे सारी सल्तनत को अपनी ही मिलकियत समझें और तुम एक गुलाम की तरह उनका हुक्म बजाओ। तुम्हें चाहिये हुकूमत की मुखालफत करना। तुम बगावत करके सुलतान से अपना हक माँगो। मैं तुम्हें इस काम में मदद दूँगी"—मल्का ने कहा।

"मगर आपको तो शहर बदर करने का हुक्म..."

"तुम पागल हो गये शाहजादे ! इस वक्त मेरी जान तुम्हारे हाथों में है। अगर मुझे अकेली ही इस जंगल में छोड़कर चले जाओगे तो मुझे जंगली जानवर फाड़कर खा जायेंगे। शाहजादे ! मैं तुमसे अपनी जान की भीख माँगती हूँ और चाहती हूँ तुम्हारी जिन्दगी को उलट-फेर करके ऐसी बना दूँ कि...तुम तैयार हो जाओ। मुँह से हाँ कह दो—बस, देखो मैं किस खूबसूरती के साथ सुलतान से अपना बदला लेती हूँ और तुम्हें सल्तनत काशगर का ताज पहना कर दीन दुनिया का मालिक बनाती हूँ।"

मल्का की बातों से परवेज के अन्तर्प्रदेश में एक महान महत्वाकांक्षा का उदय हुआ। काशगर का सुलतान बनने की अभिलाषा ने उसे अपने भाई का प्रभुत्व भूल जाने को बाध्य कर दिया। उसके हृदय में इस समय विचारों का संघर्ष हो रहा था।

"जब तुम ताजवर बन जाओगे, तब मेरी मुराद बन आयेगी। तुम सुलतान होगे और मैं मल्का। तुम मेरे दिल के मालिक होंगे और मैं तुम्हारी रानी..." कहती हुई मल्का ने आवेश में परवेज को अपने बाहुओं में जकड़ लिया। परवेज कुछ न बोला। दूषित

हृदया मल्का के प्रेम-व्यवहार से परवेज का स्वच्छ हृदय भी कुमार्ग की ओर अग्रसर हो रहा था।

"मैं तैयार हूँ मल्का! मगर यह सब कैसे हो सकता है?"

"इसकी तरकीब बड़ी आसान है।" कहकर मल्का परवेज के पास खिसक आई और धीरे-धीरे कुछ कहने लगी। परवेज ध्यानपूर्वक सुनने लगा। सुलतान को सिंहासनाच्युत करने की नींव डाली जाने लगी।

● ●

"उफ! मैं कहाँ हूँ? सर में दर्द—बदन में दर्द—यह सब क्या है?"—रोगी ने कराहते हुए अपनी आँखें खोलीं।

चारपाई के सिरहाने खड़ी हुई लड़की को देखकर वह चौंक पड़ा।

बोला—

"मेहर तुम? मेरे पास?...या खुदा! क्या यह सच है?"

मेहर उसके काले-काले बालों पर हाथ फेरती हुई बोली—"जहूर! तुम्हारी तबियत खराब है। आठ घण्टे बाद तुम होश में आये हो। ज्यादा बोलने की कोशिश न करो।"

"मगर मैं तुम्हारे झोपड़े में कैसे आया? मेरे बदन में इतना दर्द क्यों है? सर में चक्कर आने की वजह से मुझे बीती बातें कुछ भी नहीं याद आ रही हैं। तुम मुझे बताने की मिहरबानी करो मेहर!"—जहूर ने उठकर बैठने का प्रयत्न करते हुए कहा।

मेहर ने कहा—"लेटे हो। उठने की कोशिश न करो....

आखिर उठकर बैठ ही गये। या खुदा! तुम तो जैसे कुछ सुनते ही नहीं। सुनो मेरे अब्बा तुम्हें तुम्हारे कबीले से पकड़ लाये हैं। तुम इस वक्त हमारे कैदी हो....''

"कैदी हूँ?....ओह! याद आ गई सब बातें। मेहर! मैं कैदी होने पर भी खुश हूँ। जहाँ तुम हो, वहाँ कैदी की हालत में रहना मैं अपनी खुशकिस्मती समझता हूँ। लेकिन मेहर! तुमने अपने अब्बा से कहकर यह सब तूफान क्यों मचाया?''

"मैं शर्मिन्दा हूँ जहूर! मुझे उस बात का दिली अफसोस है, मगर तुम भी तो हमेशा मुहब्बत-मुहब्बत रटा करते हो। मुहब्बत क्या बला है—मैं तो यह जानती भी नहीं!''

"तुम अभी नादान हो मेहर! मुहब्बत के फौलादी पंजों में अभी गिरफ्तार नहीं हुई हो जिस दिन तुम्हारे दिल पर मुहब्बत की छाया पड़ जायेगी, उस दिन तुम देखोगी कि इसमें कितना दाह, कितनी जलन होती है मेहर! मुहब्बत वह शय है, जो हैवान को इन्सान और इन्सान को शैतान बना देती है। उफ, यह कैसी बुरी बला है?''—कहते-कहते कमजोर जहूर ने मेहर का हाथ अपने हाथ में ले लिया और....

"फिर तुम अपनी हरकतों से बाज नहीं आते? मैं तुमसे नफरत करती हूँ—नफरत!''—मेहर ने गुस्से में कहा और तुनककर दूर जा बैठी।

"मेहर मैं जानता हूँ जो तुम्हारे दिल में है, मगर तुम मुझे परेशान करने की अपनी आदत से बाज नहीं आती''—जहूर ने कहा और मुँह फेर कर लेट रहा। झोपड़ी की खिड़की से मन्द-मन्द हवा आ रही थी।

"बादल घिरे आ रहे हैं मेहर!'' जहूर ने खिड़की की राह बाहर देखते हुए कहा। मेहर उठकर खिड़की के पास आई। उसकी दृष्टि एक बार सूर्य की ओर जा पड़ी। जिसे एक बड़ा-

सा बादल का टुकड़ा ढाँके चला आ रहा था। हवा में कुछ नमी आ गई थी, जैसे मालूम होता था कि वर्षा शीघ्र ही होने वाली है।

"खुदा करे मुश्किल आसान!"—झोपड़ी के दरवाजे पर से आवाज आई।

मेहर बोली—"यह नया फकीर कौन आ गया? देखूँ तो!" मेहर बाहर आई। देखा—एक फकीर द्वार पर खड़ा है।

"खुद मुश्किल आसान करेगा बेटा! कुछ फकीर को देने की मिहरबानी करो"—बुड्ढा फकीर बोला। मेहर खिलखिलाकर हँस पड़ी। बोली—"बाबा! हम भी तो फकीर ही हैं हमारे दरवाजे पर क्या रक्खा है?"

"बेटी!"—फकीर कहने लगा—"गरीबों के ही दरवाजे पर खुदा का साया रहता है। खुदा तेरी सब मुरादें पूरी करेगा बेटी! लो, फकीर को मायूस न कर। एक मुट्ठी भीख देकर फकीर की दुआ ले।"

"तुम दुआ दोगे?"—मेहर अपनी बाल-हँसी को न रोक सकी और खिलखिला पड़ी—"इन्सान होकर इन्सान को दुआ दोगे? इतनी ताकत है तुममें?"

"फकीरों को ताकत तू नहीं जान सकती बेटी! तेरी जिन्दगी हँसी-खुशी में बीत रही है। खुदा के फजल से, फकीरों की जुबान से निकली हुई दुआ हमेशा बर आया करती है। बेटी! माँग जो तेरी मुराद हो—फकीर ने कहा और पत्थर के चबूतरे पर जमकर बैठ गया—"बेटी, तू हँस रही है। तुझे इस फकीर पर यकीन नहीं आ रहा है। तू सोच रही है कि हाड़-माँस का यह पुतला तुम जैसी हूर को क्या दुआ दे सकेगा? यही न सोच रही है तू, मगर तेरा ख्याल ठीक नहीं है..."

"बाबा!"—मेहर अविश्वासयुक्त स्वर में बोली—"तुम मुझे

दुआ देना चाहते हो ? अच्छा, मैं भी तुम्हारी ताकत देखना चाहती हूँ। जईफ फकीर, बोलो तुम मुझे दुआ दोगे ?"

"दूँगा बेटी ! खुदा की कसम खाकर कहता हूँ कि मैं तुझे दुआ दूँगा। तेरी मुराद पूरी करने के लिए खुदा से मिन्नतें करूँगा।"—फकीर बोला।

लम्बी-लम्बी सफेद दाढ़ीवाले उस वयोवृद्ध चेहरे से गम्भीरता टपक रही थी।

"मैं जानना चाहती हूँ कि मेरी किस्मत में क्या लिखा है ?" मेहर ने पूछा।

"बस, इतनी सी बात !"—फकीर बोला और वह पत्थर के चबूतरे पर घुटनों के बल बैठ गया। जमीन पर सर टेककर उसने न जाने क्या पढ़ा ? उसके अन्तिम शब्द थे—"या रब ! या खुदा ! इस नादान छोकरी की सब ख्वाहिशें पूरी कर। फकीर की मिन्नत है तेरे फरिश्ते की !"

मिन्नतें करते-करते एकाएक फकीर चौंक पड़ा। उसके मुँह से काँपती हुई आवाज निकली—"यह क्या ? कहर ! खुदा का कहर ! गजब !"

फकीर की आँखें मेहर पर आकर रुक गई—"बेटी ! मैं तेरी किस्मत पढ़ रहा हूँ। मैं देख रहा हूँ कि तेरी सब ख्वाहिशें पूरी होगी—जरूर होगी। तू सुलतान काशगर की महबूबा बनेगी। मगर खुश न हो सकेगी। तेरी जिन्दगी उलट-फेर की जिन्दगी है। शाहंशाह को पाकर, दुनियाँ का सब ऐश व इशरत पाकर भी तेरा दिल हमेशा जलता रहेगा। तेरी ही वजह से सुलतान पर भी—खुदा न करे—आफत आयेगी मगर खैर ! खुदा यही चाहता है और यही होगा भी"—कहता हुआ फकीर उठ खड़ा हुआ !

इसके बाद फकीर ने मेहर के चेहरे को ध्यानपूर्वक देखा। मेहर की मुखाकृति इस समय पीतवर्ण धारण करती जा रही थी।

उफ् ! बुड्ढा फकीर पागल हो गया है क्या ? कहाँ वह एक मामूली कबीलेवाली की लड़की और कहाँ दीन-दुनिया के बादशाह सुलतान काशगर !

फिर वह उन्हें कैसे पा सकती है ?

क्या सिर्फ फकीर की दुआ से, एक इन्सान के कहने से ऐसा हो सकता है ?

"बेटी ! खुदाई खिदमतगार तुझे जो कुछ देना था, दे चुका"-फकीर बोला—"अब उसका सवाल पूरा कर।"

मगर मेहर ने मानों सुना ही नहीं। वह तो मूर्तिवत् विस्फारित नेत्रों से खड़ी थी—एकदम मौन !

• •

शाहजादा परवेज का महल भी बहुत सुन्दर और विशाल बना हुआ है। आराम की सभी आवश्यक चीजें एकत्रित करने में कोई कमी नहीं की गई है।

परवेज अपने महल में अकेला ही रहता है। न तो उसकी अभी तक शादी ही हुई है और न उसकी शादी की ओर झुकाव ही है।

इस समय शाहजादा परवेज अपने विशेष प्रकोष्ठ में गावतकिये के सहारे एक खूबसूरत पलंग पर बैठा हुआ है। उसके सामने ही चाँदी की एक सुन्दर चौकी पर एक नवयुवक बैठा हुआ है। इस नवयुवक के चेहरे पर की बारीक मूँछे उसके कम उम्र होने की साक्षी हैं। सिर पर बहुमूल्य पगड़ी बँधी है। हाथ की ऊँगलियों

में हीरे की अँगूठियाँ चमक रही हैं। मुखाकृति का विशेष निरीक्षण करने पर, यह भी स्पष्ट प्रकट हो जाता है कि युवक का आचरण ठीक नहीं है।

"शाहजादे साहब ! देखना, मेरा असली हाल किसी पर जाहिर न होने पावे। जो कुछ कहना या करना, समझ-बूझकर—नहीं तो राजफाश होने पर हम तुम कहीं के नहीं रहेंगे"—उस नवयुवक ने कहा।

"नहीं नहीं दोस्त कमर ! तुम खातिर जमा रखो। तुम्हारा राज कोई न जान सकेगा" परवेज ने कहा—"हाँ ! तो तुम्हारा कहना यह है कि मैं बहुत ही बदकिस्मत हूँ और किस्मतवर बनने के लिए मुझे तुम्हारी सलाह लेनी चाहिये, यही न !"

"तुम ठीक समझे शाहजादे !"—कमर ने कहा—"तुम दुनिया के सबसे बदकिस्मत आदमी हो। सुलतान के भाई होकर भी तुम्हें कुछ भी अख्तियार हासिल नहीं। तुम सुलतान और वजीर के हाथ के पुतले हो। सारी सल्तनत में कुछ भी नहीं। कितनी शर्म की बात है ? तुम्हें चाहिए सुलतान को शिकारे-शमशीर बनाकर इस परदये दुनिया से हमेशा के लिए उठा दो और खुद सुलतान बनकर ऐश करो।"

"दोस्त !"—परवेज बोला—"आज बरसों से सोई हुई मेरी ख्वाहिश तुमने उभाड़ दी। सालों तक मैं भी यही सोचता रहा था कि किसी तरह मैं बादशाह बन सकूँ। मगर मेरी वह ख्वाहिश अधूरी ही रह गई। आज, जब कि मुझे तुम जैसा हमदर्द मददगार मिला है, जो कि सल्तनत के हर एक राज से वाकिफ है, तो मैं सल्तनत पाने की पूरी कोशिश करूँगा। भाई के साथ दगा करूँगा—सब कुछ करूँगा सिर्फ सल्तनत के लिये, तुम मेरी जान-जान से मदद करना।"

"सुलतान का क्या हाल है ?"—कमर ने पूछा।

"भाईजान की हालत अबतर होती जा रही है। वे सभी औरतों से नफरत करने लगे हैं और अपने ख्वाबगाह में पड़े हुए, न जाने क्या बड़बड़ाया करते हैं। सिर्फ अजूरी नाम की बाँदी उनके साथ रहती है, मगर उससे भी वे खुश नहीं रहते! सल्तनत के कामों से उन्होंने एकदम हाथ खींच लिया है। सिर्फ बुड्ढा वजीर ही सल्तनत की देख-रेख कर रहा है।"

"अभी तक तुम्हें सारी बातों का पता नहीं है शाहजादे! मुझसे सुनो! मैंने छिपे तौर पर पता लगाया है कि सुलतान की तबियत अब यहाँ से एकदम ऊब गयी है। वे इस सल्तनत को छोड़कर एक ऐसी जगह चले जाना चाहते हैं, जहाँ जाकर उनके तड़पते दिल को राहत मिल सके....यह बात तो हम लोगों के हक में अच्छी ही होगी" कमर ने कहा।

दोनों उठ खड़े हुए।

शाहजादे ने कहा—"आधी रात होने को आई, चल के आराम किया जाय।"

दोनों पास के कमरे में घुस गये।

* * * *

"तू मेरे सामने क्यों आती है? क्यों आती है तू यहाँ! उफ! औरत! औरत! औरत!"—सुलतान ने अपना माथा पकड़ लिया। क्रोध से मस्तिष्क-सिरायें सुज आई थीं—"जब देखो तब साकी, शराब! औरत!"

"बेचारी अजूरी हाथ में प्याला लिये हुए थर-थर काँपती खड़ी थी। उसे सुलतान के गुस्से का डर था, मगर वह उन्हें अकेला नहीं छोड़ना चाहती थी।

ऐसी खराब हालत में सुलतान न जाने क्या कर बैठे।

"पी लीजिये मेरे मालिक!" अजूरी ने दबी जुबान से कहा।

"पी लूँ? जहर पी लूँ?"—सुलतान एकाएक उठकर खड़े हो गये। आगे बढ़कर उन्होंने अजूरी का गला पकड़ लिया—"शैतान की बच्ची!"—उन्होंने कहा और फूल सी मुलायम अजूरी को दूर ढकेल दिया।

सुलतान पलंग पर बैठे न जाने क्या-क्या बड़बड़ाते रहे, अजूरी जमीन पर पड़ी सिसकती रही। कुछ देर बाद वह उठी और आकर सुलतान के पलंग के पास खड़ी हो गई।

"मेरे आका!" नम्र स्वर में उसने पुकारा।

"अजूरी!" एकाएक सुलतान ने अजूरी को अपने पास खींच लिया और उसके अधरोष्ठ पर प्रेम की मुहर लगा दी।

"मुझे माफ करना मेरी तितली! मुझे अपने नाज़ुक हाथों से शरबते अनार पिला!"

सुलतान की मीठी बातों से अजूरी अपना दर्द भूल गई। वह अठखेलियाँ करती हुई उठी, प्याला उठाकर उसमें शरबते अनार भरा।

"अजूरी! तू जा?"—एकाएक सुलतान का पारा फिर चढ़ गया। "काली नागिन तू जा यहाँ से। साकी! शराब औरत! उफ! मेरा दम घुटता जा रहा है। मैं इस महल से, इस सल्तनत से, इस मक्कार दुनिया से—ऊब गया हूँ। मैं जाऊँगा....तू जाती है या नहीं। जा शाहजादे को भेज! वजीर को भेज! सबको भेज दे—कह दे, मैं जा रहा हूँ। मैं इस सल्तनत को छोड़कर जा रहा हूँ। मैं इस दुनिया को छोड़कर जा रहा हूँ। यह ले! यह ले!" कहते हुए शाहंशाह ने अपना शाही चुगा फाड़कर चिथड़े-चिथड़े कर डाला। उनकी आँखें क्रोध से लाल हो गई। अजूरी धीरे-धीरे कमरे से बाहर हो गई।

सुलतान चुपचाप पलंग पर लेट रहे। श्वास-प्रतिश्वास तीव्र वेग से चल रहा था।

संसार की विश्वासघातिनी स्त्रियों की दुश्चरित्रता देखकर उनका मस्तिष्क चक्कर खा रहा था। भयानक चिन्ता उन्हें सता रही थी। वे दिन रात यही सोचते रहते थे कि उफ! फूल सी कोमल स्त्रियाँ भी कितनी भयंकर होती हैं ?

अपनी मलका का असद्-आचरण देखकर उन्हें संसार की सभी औरतों से घृणा हो गई थी। औरतों की छाया से भी वे घबड़ा उठते थे।

अजूरी द्वारा सुलतान के अस्वस्थता की बात सुनकर थोड़ी ही देर में वजीर और परवेज वहाँ आ पहुँचे।

वज़ीर ने कहा—"जहाँपनाह ! किसलिये याद फरमाया ?"

"मेरे बुजुर्ग वजीर !" शाहंशाह बोले—"मैं अब जा रहा हूँ !"

"कहाँ जा रहे हैं भाईजान ?"—परवेज ने पूछा।

"पता नहीं कहा जाऊँगा शाहजादे !" सुलतान बोले। इस समय वे इस प्रकार बातें कर रहे थे, मानों एकदम स्वस्थ हों—"मगर जाऊँगा जरूर। रोकने की कोशिश बेकार है। मेरे लौटने की भी कोई उम्मीद नहीं यही मुलाकात आखिरी होगी !....तुम वज़ीर अपनी आँख पोछ लो। रोना तुम्हें नहीं चाहिए।"

"मगर शाहंशाह ! सल्तनत का क्या होगा ? मेरा क्या होगा ? रियाया का क्या होगा ?"—बुड्ढा वजीर रो रहा था।

"तुम और शाहजादा परवेज मिलकर सल्तनत की देख-भाल करना। अब मुझसे कोई उम्मीद न रखो। जिस शख्स का दिल-दिमाग, बेकाबू हो गया हो, वह तुम्हारे पास रहकर करेगा ही क्या ? मुझे दिन रात यह दुनियादारी खटका करती है। यह महल, यह सल्तनत, यह दुनिया सब मेरे दिल की जलन को बढ़ा रहे हैं। अब मैं इन सबसे दूर—बहुत दूर भाग जाना चाहता हूँ....तुम शाहजादे ! गमगीन न हो। दुनियाँ में कोई हमेशा

नहीं रहता। आजतक तुम्हें मैंने अपने कलेजे से सटाकर रखा, तुम्हें अपनी जान से बढ़कर प्यार किया। मगर....अफसोस न करना। और अजूरी! आ जाओ! छिपी क्यों हो? तुमने मुझे आराम से रखने की बहुत कोशिश की। मैं तुमपर बहुत खुश हूँ अजूरी! अब मैं तुम्हें हमेशा के लिए छोड़कर जा रहा हूँ। ना ना! आँसू न गिराओ अजूरी! मैं जानता हूँ कि तुम मुझे चाहती हो, मगर मैं अपने दिल से मजबूर हूँ! मुझे जाना ही होगा—मैं तुम्हें आज़ाद करता हूँ, तुम जाकर बाहरी दुनिया में आराम की जिन्दगी बसर करो। वज़ीर, इस छोकरी को इतनी रकम दे दो, जो इसकी जिन्दगी के लिए काफी से ज्यादा हो!"—कहते हुए सुलतान आगे बढ़े।

वजीर, अजूरी और परवेज ने जाते हुए सुल्तान को अन्तिम बार क्रमशः तीन बार अभिवादन किया। सुल्तान बाहर आकर पैदल ही चल पड़े। जो एक दिन फूलों की शैया पर सोता था, हीरों और जवाहिरातों से खेलता था, वही शाहंशाह सारे सुखों पर लात मारकर—सबको रोता हुआ छोड़कर, सबके देखते-देखते आँखों से ओझल हो गया। समय परिवर्तनशील है!

• •

कर्बलेवालों में भयानक कोलाहल मचा हुआ था। स्त्री-पुरुष, बाल-वृद्ध सभी भय से आर्तनाद कर रहे थे। अर्धरात्रि की बेला में एक भयानक वातावरण उपस्थित हो गया था।

झोपड़ी में सोई हुई मेहर की निद्रा इस कोलाहल से भंग हो गयी, उसने सुना—कर्बलेवालों के आर्तनाद को।

मेहर का वृद्ध पिता अब्दुल्ला एक कोने में पड़ा हुआ आराम से खर्राटे ले रहा था। दूसरे कोने में, एक टूटी चारपाई पर जहूर बन्दी की अवस्था में सोया पड़ा था, परन्तु वह कुछ-कुछ जाग चुका था।

झोपड़ी में घना अँधेरा छाया हुआ था। मेहर टटोलती हुई जहूर के चारपाई की ओर बढ़ी, क्योंकि वहीं ताख पर मशाल रखी हुई थी, जो आवश्यकता के समय प्रकाश का काम देती थी।

मेहर जहूर की चारपाई के पास आकर रुकी। जहूर जाग गया था, परन्तु उसने सोने का बहाना कर लिया। बाहर अभी तक कोलाहल हो रहा था। ज्यों ही मेहर ने मशाल लेने के लिए हाथ बढ़ाया कि झोपड़ी के द्वार पर किसी जंगली जानवर के गरजने का भयानक स्वर सुनाई पड़ा। मेहर आपादमस्तक सिहर उठी और 'या खुदा' कहती हुई जहूर की चारपाई पर धड़ाम से गिर पड़ी। जहूर ने लपक कर उसे अपने अंक में ले लिया और धीरे से बोला—"मेहर! मेरी रानी! डरो नहीं, मालूम होता है कोई जंगली जानवर आ घुसा है।"

जहूर ने मेहर को अपने अंक में कस लिया था, पर मेहर को उसका यह व्यवहार अरुचिकर प्रतीत हो रहा था। उसने अंक से अपने को छुड़ाने का बहुत प्रयत्न किया मगर जहूर ने उसे न छोड़ा।

"काफिर कहीं का"—मेहर ने कसकर एक तमाचा जहूर के मुँह पर जड़ दिया।

उसी समय अकस्मात वृद्ध अब्दुल्ला की निद्रा भंग हो गई। बाहर का कोलाहल सुनकर वह उठ बैठा—"हैं! यह शोरगुल कैसा? बेटी मेहर! जरा मशाल तो जला।"

अब्दुल्ला को जगा हुआ देखकर जहूर ने मेहर को छोड़ दिया। मेहर ने आगे बढ़कर मशाल जलाई। इतने में कबीले का

एक आदमी दौड़ता हुआ झोपड़ी के द्वार पर आया और चिल्लाकर बोला—"सरदार !....सरदार !!..."

"क्या है ?"—कहते हुए अब्दुल्ला ने द्वार खोल दिया। वह आदमी डर से बुरी तरह काँप रहा था। उसके मुँह से एक भी शब्द नहीं निकल रहा था।

"बोल ! बोल !...इस तरह काँप क्यों रहा है ? क्या बात है ? क्यों शोर हो रहा है। अपना पैर जरा देख ! इस तरह काँप रहे हैं मानों पेड़ का टहनी। सम्हाल अपने को..."

अब्दुल्ला की घुड़की सुनकर उस आदमी का होश कुछ ठिकाने आया—"सरदार !"—वह कहने लगा—"एक जंगली जानवर कबीले में घुस आया है और इधर से उधर लोगों को चीरता फाड़ता हुआ दौड़ रहा है। यह लीजिये !—या खुदा !"—जानवर की दहाड़ का शब्द सुनकर वह आदमी गिरते-गिरते बचा—"वह अबतक दस आदमियों का शिकार बना चुका है सरदार ! और कई घायल पड़े हैं।"

"मैं चलता हूँ"—सरदार अब्दुल्ला बोला—"मेरी तलवार... मेरी बोतल !"

मेहर ने बुड्ढे को तलवार दी और शराब की बोतल भी। बुड्ढा बोतल को मुँह से लगाते ही एक साँस में पी गया। और उस ओर दौड़ पड़ा, जिधर से लोगों के चिल्लाने की आवाज और उस जानवर के दहाड़ने का शब्द सुनाई पड़ रहा था।

"अब क्या होगा ?" मेहर ने काँपते हुए स्वर में कहा।

"घबड़ाओ नहीं मेहर !"—जहूर ने उसको सान्त्वना देने का प्रयत्न किया—"फिक्र न करो। खुदा हाफिज !"

❀ ❀ ❀

"रात बीत गई, दिन हुआ, दोपहर होने को आया, लेकिन अब्बा अभी तक न लौटे"—मेहर ने कहा। जहूर और मेहर

झोपड़ी में बैठे हुए बात कर रहे थे—कबीलेवालों से पूछने पर मालूम हुआ कि अब्बा चार आदमियों को साथ लेकर उस जानवर के पीछे-पीछे गये हैं, मगर ताज्जुब है कि अभी तक नहीं लौटे। "या खुदा! मेरे अब्बा को क्या हुआ?"

"घबड़ाओ नहीं मेहर!"—जहूर ने कहा—"तुम्हारे अब्बा जरूर किसी वजह से रुक गये हैं?"

"हाय न जाने उनपर क्या बीत रही होगी?"—कहकर मेहर ने एक ठण्ढी साँस ली।

"मेहर! हमें उनकी खबर लेना जरूरी है। अगर तुम मुझे इस कैद से थोड़ी देर के लिए आजाद कर दो और हाथ में एक तलवार दे दो, तो मैं तुम्हारे अब्बा को जल्द से जल्द सहीसलामत लौटा लाऊँ। अगर चाहो तो तुम भी चल सकती हो"—जहूर ने सोचकर कहा।

"मगर तुम्हें आजाद कर देने से अब्बा नाराज होंगे"—मेहर ने कहा!

जहूर बोला—"तुम नाहक आगा-पीछा कर रही हो मेहर! खुदा न करें कि तुम्हारे अब्बा की जान खतरे में पड़ जाय। मेहर! मैं तुम्हारी मदद करना चाहता हूँ।"

"अच्छा चलो! मैं भी चलूँगी। अब्बा की खबर लेना जरूरी है, मगर घोड़ा तो एक ही है।"

"एक ही से काम चल जायगा"—जहूर ने कहा—"हम दोनों एक ही घोड़े पर चलेंगे। तुम फिक्र न करो। तुम्हारे अब्बा का घोड़ा काफी मजबूत है।"

"मगर एक घोड़े पर...."

"पागलपन की बातें न करो मेहर! वक्त कीमती है"—जहूर ने कहा।

मेहर तैयार हो गई। जहूर ने खूँटी से लटकती हुई एक तल-

वार लेकर अपनी कमर में खोंस ली और घोड़े पर सवार हो गया मेहर भी उसके आगे जा बैठी।

मेहर इस समय अपने अब्बा के लिए बहुत घबड़ा उठी थी—यही कारण था कि उसने जहूर के आगे, जहूर की गोद में बैठना मंजूर कर लिया।

घोड़ा दोनों को लेकर हवा से बातें करने लगा।

नदी-नाले पार करता हुआ घोड़ा सरपट दौड़ा चला जा रहा था। मेहर और जहूर मौनावस्था में घोड़े पर बैठे थे। दोनों में से कोई एक शब्द भी नहीं बोल रहा था। केवल शून्य वातावरण में घोड़े की टाप की आवाज ही सुनाई पड़ रही थी! पगडण्डी के दोनों ओर घना जंगल था।

"अब मैं थक गई हूँ जहूर!...मगर तुम चल कहाँ रहे हो? एक मंजिल तो खत्म कर दी। यह खौफनाक जंगल....अब्बा का कहीं पता नहीं! आखिर तुम्हारा इरादा क्या है?"—मेहर ने घने जंगल को सशंक नेत्रों से देखते हुए कहा।

"घबड़ाओ नहीं मेहर!" कहते हुए जहूर ने कसकर घोड़े को एँड़ लगाई। फिर दोनों चुप।

पास के पेड़ों पर चिड़ियों का कलरव सुनाई पड़ रहा था। जंगल की हवा साँय-साँय करती हुई बह रही थी।

दो घंटे तक बराबर घोड़ा दौड़ता रहा। अन्त में मेहर घबड़ाकर बोली—"मैं आजिज आ गई इस सफर से। घोड़े की हालत देखो—बेचारा हाँफ रहा है। रोक दो घोड़े को।"

"तुम थक गई मेहर।"—कहकर जहूर ने मेहर को अंक में जोरों से जकड़ लिया। मेहर का पारा चढ़ गया। उसकी साँस जोरों से चलने लगी। वह सक्रोध बोली—"तुम फिर—वही शरारत....छोड़ दो मुझे। आखिर तुम्हारा इरादा क्या है?"

"मेरा इरादा?"—जहूर हँसता हुआ बोला—"मेरा इरादा

अब एक दूसरी दुनिया बसाने का है मेहर ! जहाँ सिर्फ हम, तुम और हमारी मुहब्बत रहे—यानी अब हम और तुम आजाद हैं और घर से इतनी दूर आ गये हैं कि कोई हमारा पता भी नहीं पा सकता। आओ ? इस जंगल में, इस सुनसान जगह में, हम तुम मिलकर एक हो जाँय।" जहूर ने घोड़ा रोका।

"तुम बुजदिल हो। काफिर हो। मुझे घर से इतनी दूर लाकर मुझपर जुल्म करना चाहते हो"—मेहर ने विवशतापूर्ण स्वर में कहा।

"तुम घबड़ाओ नहीं मेहर आज तक मैंने तुम्हें अपनाने के लिए क्या-क्या मुसीबतें नहीं उठाई ? क्या-क्या झिड़कियाँ नहीं सहीं ? क्या तुम्हें मालूम नहीं ? अब अधिक बेताब न बनाओ मेहर ?" जहूर ने उसे और जोर से अपने बाहुपाश में आबद्ध कर लिया—"मेहर ? आज तक जिस चीज को इन्सान बनकर न पाया, उसे हैवान बनकर हासिल करूँगा।"

"मुहब्बत के जोश में न आओ जहूर, अपना फर्ज समझने की कोशिश करो। तुम दुश्मन के बेटे हो। मैं तुम्हारी नहीं हो सकती। मैं बगैर अब्बा के हुक्म के कुछ भी नहीं कर सकती"—मेहर ने कुछ झुँझला कर कहा।

मेहर की विवशता ने जहूर को नम्र बना दिया—"मेरी हालत देखो मेरी आरजू, मेरी मुराद, खुदा जाने कब पूरी होगी ? मेहर ! तुम नाहक ही मुझे परेशान करती हो। मैं दिन रात खून के घूंट पीकर जिन्दगी बसर कर रहा हूँ। और तुम्हें मुझपर जरा भी तरस नहीं आती ?" जहूर की आवाज में आजिजी थी—"मेहर मुझ पर खफा न हो। इस तरह भौं टेढ़ी न करो...हैं। यह आवाज कैसी ? मालूम होता है कुछ लोग इधर आ रहे हैं।"

जहूर और मेहर ने सामने की ओर देखा—कुछ अश्वारोही जिनकी वेशभूषा भले आदमी होने की द्योतक न थी, उन्हीं की

ओर चले आ रहे थे। उन लोगों ने इन दोनों को देख लिया था। उन्हें देखकर जहूर चौंक पड़ा—"हैं ये तो जंगली डाकू मालूम पड़ते हैं। राहगीरों को लूटकर उनका माल असबाब ले लेना और उन्हें पकड़ कर थोड़े दामों पर गुलाम की हैसियत से सौदागर के हाथ बेच देना ही उनका काम है। खैर आ जाने दो। घबड़ाओ नहीं !" कहकर जहूर ने अपनी तलवार सम्हाली।

मेहर को पीछे कर वह डट कर खड़ा हो गया, एक वीर सिपाही की तरह। डाकुओं का दल पास आकर जहूर पर टूट पड़ा, जहूर की तलवार बिजली की तरह हवा में नाच उठी।

❀ ❀ ❀

"हाय मेरी बेटी ! तू कहाँ गई ?" बुड्ढा अब्दुल्ला अपनी झोपड़ी में चारपाई पर पड़ा हुआ बच्चों की तरह रो रहा था—"अगर नहीं पता लगेगा तो कबीले वालों को काटकर फेंक दूँगा। इतने लोगों के रहते हुए मेरी बेटी और मेरा बैरी गायब ?....यह क्या पानी बरसने लगा और अँधेरा भी हो गया—और मुझे होश तक नहीं ? या खुदा मुझे हिम्मत दे"—कहता हुआ अब्दुल्ला उठा और झोपड़ी के कोने में रखी हुई मशाल जला दी। बाहर अन्धकार के साथ-साथ वर्षा का ताण्डव हो रहा था।

"मैं पनाह चाहता हूँ"—झोपड़ी के बाहर से आवाज आई। अब्दुल्ला ने द्वार खोल कर देखा—सत्ताइस अट्ठाईस वर्ष का एक नवयुवक-यात्री जलकणों से भीगता हुआ उसके द्वार पर खड़ा था। उसकी मुखाकृति से यह प्रकट हो रहा था कि वह किसी उच्च वंश का है। समय ने उसे ये दिन दिखलाये हैं। साधारण वस्त्र पहने रहने पर भी उसपर जैसे तेजस्विता नाच रही है।

"क्या चाहते हो ?—"अब्दुल्ला ने सरोष पूछा।

"पनाह चाहता हूँ बुजुर्ग !"—आगन्तुक ने नम्र स्वर में कहा।

"आ जाओ मेरे नौजवान दोस्त !"—अब्दुल्ला बोला।

"आओ बैठो....हाँ ! तो तुमने मेरी लड़की को देखा है क्या ? जरूर देखा होगा ?....क्या ? नहीं देखा....निकल जाओ यहाँ से.... अच्छा !...अच्छा ठहरो, मत जाओ। बूढ़े अब्दुल्ला के रहते हुए तुम्हें पनाह की कमी नहीं मेरे दोस्त !...मगर तुम भीगे हो न ?.... अपने कपड़े उतार दो...यह लो....मेरे पास दूसरा कपड़ा नहीं है, सिर्फ यही धोती है मेरी बेटी की। इसे पहन लो....। ओह जनानी धोती नहीं पहन सकते ? भीगे ही पड़े रहोगे ? क्या वाहियात दिमाग है..."

"मैं औरतों से नफरत करता हूँ !"—बुड्ढे की बहकी बातों से ऊब कर अन्यमनस्क भाव से आगन्तुक बोला।

"क्या औरतों से नफरत करते हो ? वल्लाह ! दुनिया का ऐसा कौन-सा शख्स है जो औरतों से नफरत कर सका है ? नहीं है इस वक्त मेरी बेटी, नहीं तो देखता कि तुम कबतक नफरत कर सकते हो ? सच कहता हूँ बेटे ! तुम्हारी और उसकी जोड़ी खूब फबती। अगर वह आज मेरे पास होती तो जरूर उसकी शादी तेरे साथ कर देता। हाँ तो क्या सचमुच तुमने उसको नहीं देखा ?"

"किसको ?"

"उसको, मेरी बेटी को !"

"आपकी बेटी आखिर है कौन ?"

"नहीं जानते तुम उसे पगले ? मेरी बेटी थी, जैसे जन्नत की हूर। आज रात से गायब है।" बुड्ढे ने सारी कहानी सुलतान को सुना दी।

सुलतान ने कहा—"आप घबड़ायें नहीं। मैं कोशिश करके उसकी खोज करूँगा।"

तुम्हारी बातें मुझे बहुत अच्छी लग रही है नौजवान ! तुम्हें तो किसी बादशाहत में पैदाइस लेनी थी....अच्छा लो, तुम मेरे ही कपड़े पहन लो। उफ ! बड़ी सरदी है। इस बारिश ने इतनी

सर्दी पैदा कर दी है...तुम काँप रहे हो ? यह लो थोड़ी सी शराब....हाँ हाँ पीलो ! क्यों ? क्यों रख दी बोतल ?....यह ठर्रा नापसन्द है ?...मालूम होता है कि कोई बड़े भारी बादशाह हो कि यह देशी शराब नहीं छू सकते। पी लो ! बदन में गर्मी आ जायगी। पी लो मेरा हुक्म है। जानते हो मैं कौन हूँ ? मैं हूँ बुड्ढा अब्दुल्ला—इस कबीले का सरदार....हाँ ठीक कुल पी जाओ।"

अनिच्छा रहते हुए भी आगन्तुक ने वह तेज शराब गले के नीचे उतार ली !

हृदय में जैसे अग्नि प्रज्वलित हो उठी।

कहाँ अंगूरी शराब और कहाँ महुए का ठर्रा—कैसे पसन्द आता ?

"इस तरह धीरे-धीरे पी रहे हो, मानों गले का छेद छोटा हो ? देखो, इस तरह..." अब्दुल्ला ने एक दूसरी बोतल लेकर अपने ओठों से लगाई और एक ही साँस में सब साफ कर गया—"देखो !....अच्छा तुम्हारे पास तलवार है न ? हाँ ! है तो....तो उठा लो अपनी तलवार, इधर आ जाओ। थोड़ी देर के लिए मुझ बुड्ढे की तलवार से तलवार बजाओ।"

कहकर अब्दुल्ला अपनी तलवार लेकर उठ खड़ा हुआ। आगन्तुक अब तक इस बुड्ढे के पागलपन से पूर्णतया ऊब चुका था। उसे इस बात का पछतावा हो रहा था कि उसने किस बुरी घड़ी में इस झोंपड़ी में पैर रखा।

"आओ !"—अब्दुल्ला कहने लगा—"तुम्हें लड़ना ही पड़ेगा। उठा लो तलवार....शाबास ! आ जाओ, यह लो ! मुझे पागल न समझना बेटे ! मैं तेरा जोर देख रहा हूँ। शाबास ! खूब वार करता है तू।"

आगन्तुक लापरवाही से लड़ रहा था और साथ ही बुड्ढे की सनक से विस्मित भी होता जा रहा था।

"खूब लड़ते हो नौजवान। अच्छा! रख दो तलवार!—यह है मेरा बिस्तर, सो जाओ इसीपर। मैं आज जमीन पर ही सो जाऊँगा"—बूढ़े ने कहा।

आगन्तुक तलवार रखकर बिस्तर पर जा लेटा।

आज कई दिनों से बेचारा इधर-उधर भटक रहा था, परन्तु हृदय में जलती हुई आग शान्त न होती थी। वह जिस शान्ति की खोज में निकला था, वह उसे नहीं मिल सकी थी और न तो निकट भविष्य में मिलने की आशा ही थी।

• •

मनुष्य जब अच्छाई की सीमा का उलंघन कर, बुराई को अपनाने लगता है तो उसमें हित अहित सोचने का ज्ञान नहीं रह जाता।

शाहज़ादा परवेज हर तरह की बुराइयों से आक्रान्त हो चुका था और इन बुराइयों की ओर ले जानेवाला था उसका दोस्त कमर जो आज महीनों से आकर उसका अन्तरंग मित्र बन बैठा था उसकी बुरी संगत ने ही परवेज ने जिसने कभी शराब न पी थी, आज कल शराब में डूबा रहता है।

अपने महल में बैठा हुआ परवेज कमर से बातें करने में व्यस्त था—"दोस्त, तुम्हारी राय से तो सब काम कर रहा हूँ। सल्तनत की सारी बागडोर भाईजान ने मुझे सौंपा था, मगर वह बुड्ढा अभी तक यही सोच रहा है कि भाईजान की तबियत जल्द ही अच्छा हो जायगी और वे आकर फिर से इस सल्तनत का भार

सम्हालेंगे, मगर उस बेवकूफ बुड्ढे को नहीं मालूम कि अब सुलतान शायद ही लौट सके....”

“हाँ ? तो सुलतान के पीछे तुमने अपने सिपाही रवाना कर दिये हैं ?”

“हाँ ! मैं अपने पचीस हथियारबन्द सिपाहियों को सुलतान की खोज में रवाना कर चुका हूँ, जो मौका पाते ही उन्हें मौत के घाट उतार देंगे और तब सुलतान इस सल्तनत को सम्हालने के लिये कभी न आ सकेंगे। अच्छा हुआ, जो तुमने मुझे यह राय दी, नहीं तो हमेशा ही वलीजान के वापस आने का डर लगा रहता....देखें हमारे सिपाही क्या करके आते हैं ?”

“क्या है !”—सहसा दरवाजे पर एक सिपाही को देखकर परवेज ने पूछा “लौट आये तुम लोग ? और सब कहाँ हैं ?”

सिपाही ने पहले तीन बार अभिवादन किया, फिर बोला—“और लोग बाहर हैं आलीजाह !”

“काम हुआ ?”

“जी नहीं ! सुलतान का पता लगाने की हमने बहुत कोशिश की मगर सब बेकार। न जाने वे दुनिया के किस परदे में गायब हो गये हैं। आप सच जानिये हुजूर-सलामत, कि हम अपनी कोशिश से बाज नहीं आये”—सिपाही ने कहा।

“तुम लोग नमकहराम हो। जाओ ! फिर से सुलतान का पता लगाओ। जी तोड़कर ढूँढ़ो और जल्द सुलतान का सर काट लाओ। जाओ ! अभी जाओ !”—परवेज ने गरज कर कहा—“और सुनो !”

“हुक्म शाहजादा हजूर !”—सिपाही ठिठक गया।

“देखो ! अगर तुम लोगों ने मेरा काम कर दिया तो मैं तुम लोगों को मालामाल कर दूँगा, इतनी दौलत दूँगा कि तुम सारी जिन्दगी चैन से काट सकोगे...तुम कहते हो कि सुलतान का पता

नहीं—मगर मैं कहता हूँ कि तुम लोग जमीन आसमान एक कर दो। सुलतान कहीं न कहीं तुम्हें जरूर मिलेंगे। हाँ! एक बात ख्याल रखना, उनकी पोशाक बहुत मामूली होगी। अब जाओ।"

सिपाही चला गया और इधर प्याले पर प्याले गले के नीचे उतरने लगे।

❀ ❀ ❀ ❀

घने जंगल की एक झाड़ी में २०, २५ सिपाही छिप कर बैठे हैं और सामने की पगडण्डी पर आते हुए एक साधारण मुसाफिर की ओर गिद्ध-दृष्टि से देख रहे हैं। मुसाफिर निर्भय होकर अपना मार्ग तय करता हुआ आ रहा है।

"सुलतान ही तो हैं!"—एक सिपाही ने कहा—"होशियार हो जाओ। देखो, कितने मामूली कपड़े पहन रखे हैं!"

"बेशक सुलतान ही हैं" —सिपाहियों के जमादार ने कहा—"तुम नम्बर तीन, अपनी बन्दूक हाथ में ले लो। शाबाश! तुम्हारा निशाना अचूक है। देखना शिकार हाथ से न जाने पावे।"

उस सिपाही ने जिसे लक्ष्य करके उक्त बातें कही गई थीं, अपनी बन्दूक हाथ में ले ली।

दूसरे ही क्षण उसकी बन्दूक तन गई।

धांय! धांय!!

और बेचारे मुसाफिर के मुँह से जोरों की एक चीख निकल कर दूर तक बन प्रदेश में गूँज उठी। उसका शरीर कटे पेड़ की तरह गिरकर पृथ्वी पर छटपटाने लगा।

पेड़ पर बैठा हुआ एक कौवा जोरों से बोल उठा—"काँव-काँव"।

"लो!"—सिपाहियों के मुंह से खुशी की आवाज निकल पड़ी—"अब सुलतान का सिर ले चलकर शाहजादा परवेज से

मुंह माँगा इनाम लो !"—सब सिपाही उस मुसाफिर की शव की ओर बढ़े।

❀ ❀ ❀ ❀

"काम हो गया ! काम हो गया दोस्त कमर ! अहा ! हा !"—परवेज ने कमर का कंधा पकड़कर झकझोर दिया—"आज हम लोगों की मुराद पूरी हुई। हमारे सिपाहियों ने सुलतान को मौत के घाट उतार दिया है। अब वे कभी न लौट सकेंगे दोस्त ! अब हम और तुम आजाद हैं....आजाद !"

"आपे से बाहर न हो शाहजादे ! सुलतान का सर कहाँ है मँगाओ तो"—कमर ने कहा।

"अभी आया"—परवेज बोला—"सिपाही ! सर लाओ !"

सिपाही बाहर जाकर एक गठरी उठा लाया। गठरी रक्त-प्लावित थी। सिपाही ने गठरी खोली।

परवेज और कमर दोनों ने गौर से उस सर को देखा।

कमर बोला—"बेशक ! यह सुलतान की ही सर है....मगर हैं, यह क्या ?" कमर के मुँह से आश्चर्य की एक आवाज निकल पड़ी।

"यह क्या ?"—कहता हुआ कमर जमीन पर झुककर सिर को गौर से देखने लगा।

कान के पास हाथ ले जाकर उसने न जाने क्या देखा, फिर बोला—"नहीं। यह सुलतान का सिर नहीं है। हालाँ कि सूरत हूबहू उनसे मिली है, मगर मेरी आँखें धोखा नहीं दे सकतीं—उनके कान के बगल में एक मस्सा है।"

"तो क्या यह किसी बेगुनाह का सिर है ?"—परवेज झल्ला कर बोला–"शैतानों ! पहचानते भी न बना तुम लोगों से ? बेगुनाह का सिर काट लाये ?"

"क्या करें शाहजादे साहब! हमारी नजरों का कसूर नहीं है। आप ही बतायें कि इसकी हूबहू सूरत सुलतान जैसी है या नहीं? हमारा कसूर माफ करें गरीब परवर!"—एक सिपाही ने गिड़गिड़ाते हुये कहा।

"जाओ, फिर से खोज करो। बगैर फतहयाबी के मुंह न दिखाना' परवेज ने कहा और सिपाही चले गये।

"दोस्त कमर!" परवेज ने आगे बढ़कर कमर को अपने अंक में कस लिया।

"हाँ-हाँ! यह क्या कर रहे हो? इतने बेताब न बनो! छोड़ो, कोई आ रहा है....उफ! यह तो बुड्ढा वजीर है कितने गौर से मुझे देख रहा है। शाहजादे, मैं जाता हूँ, नहीं तो यह बुड्ढा जरूर पहचान जायगा। तुम इससे निपटो!"—कहता हुआ कमर दूसरे दरवाजे से बाहर हो गया।

"किसके साथ मौज किया जा रहा था शाहजादे साहब?" वजीर ने अभिवादन करते हुए कहा—"कौन था वह....और यह प्याला...यह सुराही...क्या अब शरबतेअनार का भी शौक हो गया? क्यों न हो...."

• •

जंगल-जंगल दौड़ते रहने पर भी दिल को राहत न मिली। महल, सल्तनत छोड़ी—सब कुछ छोड़कर यह मामूली पोशाक पहनी, दर-दर की खाक छानी, मगर दिल की जलन न गई—न गई। उफ, थकान से पैर फटा जा रहा है और यह लू ऐसी तेज चल

रही है कि बदन तक झुलसा देती है...” बड़बड़ाता हुआ वह मुसाफिर एक घने पेड़ के नीचे बैठकर हाँफने लगा।

जंगल की तेज लू जोरों से चल रही थी और ऊपर आकाश से सूर्य भगवान आग उगल रहे थे। भयानक समय था।

“प्यास लगी है मगर जंगल में कोई चश्मा भी नहीं। उफ! गला रूँधा जा रहा है। या खुदा क्या करूँ?”—बेचारा मुसाफिर, मुसाफिर कहिए या सुलतान काशगर। जिसे प्यास लगने पर अंगूर का शर्बत मिलता था, आज वह पानी की एक बूँद के लिए तरस रहा है! कैसी विडम्बना है!

इतने में थोड़ी दूर पर किसी मकान के होने का उन्हें आभास मिला...परन्तु इस वियाबान जंगल में यह मकान कैसा? जहाँ किसी आदमी का पहुँचना गैरमुमकिन है, वहाँ मकान किसलिए बनाया गया है? उसमें रहता कौन होगा? ऊँह! मुझे इन सब फजूल की बातों से क्या मतलब? मुझे प्यास बदम किये जा रही है, मुझे वहाँ पहुँचना ही चाहिये।” स्वतः बड़बड़ाता हुआ सुलतान उसी ओर बढ़ा।

मकान के द्वार पर पहुँच कर सुलतान रुके।

बाहर से देखने पर मकान विशाल और सुदृढ़ बना हुआ मालूम पड़ता था। भीतर द्वार बन्द था। पास ही इमली का एक ऊँचा वृक्ष था।

लू पूर्ववत् वेग से चल रही थी।

सुलतान ने आगे बढ़कर द्वार का कुण्डा खटखटाया और आवाज दी—“एक मुसाफिर लू और गर्मी से परेशान होकर पनाह के लिए दरवाजे पर खड़ा है। मेहरबानी करके दरवाजा खोलें।”

भीतर से किसी के आने की पदध्वनि सुनाई पड़ी। सुलतान सजग होकर खड़े हो गये।

दूसरे ही क्षण द्वार खुला और वहाँ पर खड़ी दिखाई दी एक ऐसी आकृति, जिसे देखकर सुलतान काँप उठे।

"उफ। औरत। जहाँ जाता हूँ वहीं औरत। जिससे नफरत करता हूँ वही बार-बार सामने आती है। खुदा भी मानों मेरे साथ मजाक कर रहा है।" सुलतान का मस्तिष्क एकबारगी चक्कर खा गया और वे मूर्छित होकर गिरते-गिरते बचे!

"मुसाफिर!"—उस सौन्दर्य की प्रतिमा ने, जिसने अभी-अभी द्वार खोला था, मधुर स्वर में कहा—"तुम बहुत परेशान दीख पड़ते हो। अन्दर आ जाओ।"

परन्तु सुलतान ने उसकी बात का कुछ भी उत्तर न दिया। उसकी ओर देखा तक नहीं।

संसार की प्रत्येक औरत से उन्हें घृणा हो गयी थी। उनके दिल की जलन औरतों को देखकर और भी तीव्र हो उठती थी।

कहाँ तो गर्मी और लू से घबड़ा कर आश्रय पाने की लालसा से वे इधर आये थे और कहाँ यहाँ आकर उनके दिल में और आग लग गई।

वे उलटे पाँव लौटने लगे।

"तुम जा रहे हो मुसाफिर?"—उस औरत ने पूछा।

उसके स्वर से विवशता टपक रही थी।

सुलतान बोले—"मैं रुक नहीं सकता—जाऊँगा ही"

"तुम न जाओ मुसाफिर।" कहते-कहते उस सुन्दरी ने आगे बढ़कर सुलतान का हाथ पकड़ लिया।

सुन्दरी का हाथ लगते ही सुलतान के दग्ध-हृदय को जैसे शांति मिली, स्फूर्ति मिली और जलन की औषधि भी।

कहाँ औरतों से घृणा और कहाँ नीरव वन्य प्रदेश में एक औरत का स्पर्श। कितना आश्चर्यजनक परिवर्तन। वस्तुतः सुलतान के दिल की जलन कम हो गई थी।

"तुम न जाओ मुसाफिर।"—सुन्दरी ने फिर कहा और सुलतान का हाथ पकड़े हुए वह दरवाजे की ओर बढ़ी—"हिचको नहीं मुसाफिर। इसे अपना ही घर समझो!"

सुलतान पर न जाने क्या जादू हो गया था कि वे उस सुन्दरी के साथ चुपचाप अन्दर चले गये।

सुन्दरी ने उन्हें एक चारपाई पर बैठा दिया। सुलतान के हृदय की गति विचित्र हो रही थी। इस अपरिचित औरत की ओर, जाने क्यों उनका हृदय आकर्षित होता जा रहा था—वही हृदय जो अब तक घृणा की दावाग्नि में विदग्ध हो रहा था।

सुलतान ने एक क्षण के लिए उस सुन्दरी पर आँखें डाली—उफ! कितना खूबसूरत चेहरा है, कैसी जवानी है, कैसा अछूता हुस्न है।

सब कुछ देखकर सुलतान का हृदय न जाने क्यों उस सुन्दरी की ओर दौड़ पड़ा।

"थके दीखते हो मुसाफिर! लेट जाओ, मैं तुम्हारे पैर दबा देती हूँ"—सुन्दरी के मुख से निकली हुई इस छोटी-सी शब्दावलि में न मालूम क्या आकर्षण था कि सुलतान आपादमस्तक सिहर उठे—मानों उसने उन्हें बेदाम खरीद लिया हो।

उन्होंने कहा—"नहीं, तुम्हें तकलीफ करने की जरूरत नहीं—मगर हाँ तुम और तुम्हारा घर—दोनों मुझे बहुत पसन्द आये। मगर तुम ऐसे सुनसान मकान में अकेली किस तरह रहती हो? क्या..."

"मेरी कहानी बहुत दर्दनाक है मुसाफिर।" सुन्दरी चारपाई पर सुल्तान के पास बैठती हुई बोली।

सुलतान की सुन्दरता ने उसे भी अपनी ओर आकर्षित करना आरम्भ कर दिया था। दोनों ओर से प्रेम अंकुरित होने लग गया था।

"तुम्हारा नाम क्या है ?"—सुलतान ने पूछा।

"सुन्दरी की मतवाली आँखें सुलतान के मुख पर केन्द्रित हो गयीं। बोली—"मेरा नाम मेहर है मुसाफिर।"

"मेहर!"—सुलतान ताज्जुब से बोल उठे—"यह नाम तो कहीं सुना है परन्तु याद नहीं आता...."

"मैं एक मशहूर कबीले के सरदार अब्दुल्ला की बेटी हूँ—"

"ओह याद आ गया—याद आ गया" सुलतान उछल पड़े—"मेहर मैं तुम्हारे घर एक दिन गया था। तुम्हारे अब्बा तुम्हारे लिये रंजीदा हैं। अच्छा हुआ कि तुम मिल गई...."

सुलतान ने आद्योपान्त सब कहानी सुना डाली परन्तु यह न कहा कि वे सुलतान काशगर हैं।

"और तुम कौन हो मुसाफिर ? तुम्हारी बातें तो बड़ी अच्छी हैं।" मेहर ने पूछा।

"मैं एक अदना आदमी हूँ, जिसके पास न घर है न जर है, परन्तु नाम सुलतान है।"

"सुलतान ?" मेहर साश्चर्य बोली—"सुलतान तो बादशाह को कहते हैं..."

"नहीं-नहीं मेहर ! मेरा नाम सुलतान है....अच्छा ! तुम अपनी कहानी शुरू से सुना जाओ ?"

"मेहर धीरे-धीरे सब कहानी कह गई।

आखिर में बोली—"मुझे और जहूर को पकड़ कर डाकुओं ने यहाँ ला रखा। यह डाकुओं का ही मकान है। घबड़ाओ नहीं, गुलाम और बाँदियों का रोजगार करना ही इन डाकुओं का काम है। वे गिनती में पचास हैं। महीने में एक बार वे इस जगह आते हैं और अपने पकड़े हुए आदमियों को यहीं रखते हैं। २५, ५० इकट्ठे हो जाते हैं तो उन्हें ले जाकर गुलाम और बाँदियों की तरह बेंच देते हैं।....हाँ तो हमें और जहूर को भी उन्होंने यहाँ

लाकर रक्खा। उनके सरदार की निगाह जब मुझपर पड़ी, तो उसने मुझे रोक लिया और बेचारा जहूर दूसरे ही दिन गुलाम बनाकर शहर काशगर बिकने के लिये भेज दिया गया। अच्छा ही हुआ। वह मुझे बहुत परेशान भी किया करता था।....आज कल सरदार मुझे बेहद तंग करता है। मेरी जान अजीब आफत में पड़ी रहती है। अब तुमने मेरा दुख-दर्द सुन लिया है तो क्या मेरी मदद करोगे मुसाफिर?"

"करूँगा! जरूर करूँगा!"—सुलतान ने कहा।

"मैं सच कहती हूँ सुलतान, तुम मेरा इतना भला कर दो तो, मैं जिन्दगी भर तुम्हें न भूल सकूँगी। तुम बड़े अच्छे हो सुलतान!" मेहर ने कहा।

वही मेहर, जिसे जहूर की सूरत तक से नफरत थी, सुलतान को देखकर अपना दिल खो बैठी। आज उसे ख्याल आया कि मुहब्बत कितनी प्यारी चीज है।

"मेहर!"—सुलतान मेहर के और पास खिसक आये—"तुमने मुझे जिला दिया। मेरा दिल बेतरह जल रहा था मगर तुमने न जाने कैसे मेरे दिल की आग बुझा दी। मैं औरतों से नफरत करता था मगर अब जो देख रहा हूँ, इससे मालूम पड़ता है कि मैं गलत सोच रहा था मेहर! तुम कितनी खूबसूरत हो" सुलतान ने मेहर के कोमल हाथों को अपने हाथों में ले लिया। उन्हें किसी स्वर्गीय आनन्द का सा अनुभव हो रहा था!

वह अपने आप तक को भूल गए थे परन्तु जिह्वा हिल रही थी—"मेहर! इस दिल में तुम्हारी भोली सूरत आ बैठी है। मैं एक अदना मुसाफिर तुम्हारी मुहब्बत का प्यारा हूँ। दर-दर भटकते-भटकते मुझे एक ऐसी चीज मिल गई है जो मेरे दिल को पूरी तरह से राहत दे सकेगी—और यह चीज तुम हो मेहर! मुझे नाउम्मीद न करना। मैं प्यासा हूँ—प्यासा!"

"मुसाफिर ! सुलतान...." मेहर के मुँह से अस्फुट स्वर निकला। वह भी आपा खो चुकी थी—"आह, मैं नहीं जानती थी सुलतान कि मुहब्बत में इतनी राहत देनेवाली चीज है। तुम्हें पाकर मैं बहुत खुश हूँ।"

"मैं भी मेहर ! मेरे दिल की रानी !"—सुलतान ने कहा और दोनों के अधरोष्ठ एक साथ मिलकर, शान्त वातावरण के लिए एक विचित्र ध्वनि छोड़कर पृथक हो गये। ग्रीष्म-ऋतु की गर्मी में भी उन्हें शीतलता का अनुभव हुआ।

इसी समय बाहर से किसी के गाने की ध्वनि सुनाई पड़ी।

दोनों के सुखमय संसार में अन्धकार की धूमिल छाया का प्रवेश हो गया।

"हैं, यह गाने की आवाज किसकी ?"—सुलतान साश्चर्य बोले। मेहर अत्यधिक घबड़ा उठी थी।

वह बोली—"मालूम होता है सरदार अपने गरोह के साथ लौट आया है, यह गाने की आवाज कादिर की है। वह सरदार का दाहिना हाथ है।"

सुलतान की हृदय स्पन्दन-गति तीव्र हो गई थी।

"अब हम बुरे फँसे। उनके आने की आज जरा भी उम्मीद न थी। वे तो अभी हफ्तों में आनेवाले थे अब क्या होगा ?" मेहर ने कम्पित स्वर में कहा।

"यहाँ कोई तलवार है ?" सुलतान ने पूछा।

मेहर बोली—"तलवार से काम नहीं चलेगा सुलतान ! उनकी गिनती बहुत ज्यादा है। अगर तुम उनसे भिड़ गये तो तुम्हारी खैर नहीं। ओह, वे सब दरवाजा खटखटा रहे हैं। खोलना चाहिये....या खुदा ! क्या करूँ मैं ? अच्छा सुलतान ! तुम इस चारपाई के नीचे छिप जाओ, जल्दी करो ?"

और कोई रास्ता न देख सुलतान चारपाई के नीचे जा छिपे।

मेहर ने आगे बढ़कर दरवाजा खोल दिया। डाकू अन्दर आ गये और अपनी कोठरियों में जाकर आराम करने लगे।

सरदार मेहर के साथ उस कोठरी में आया, जिसमें सुलतान छिपे थे। चारपाई पर बैठकर सरदार बोला—"मेहर!"

"हाँ सरदार!" मेहर ने आर्त्त स्वर में कहा!

"आज तो तुम्हारे चेहरे पर खुशी झलक रही है। इतना खुश तो मैंने तुम्हें कभी नहीं देखा। आओ बैठ जाओ"—सरदार ने कहा।

मेहर सरदार की बगल में चारपाई पर जा बैठा! सरदार बहुत खुश हुआ। क्योंकि उसने मेहर को इतना प्रफुल्लित कभी न देखा था।

और दिन तो जब वह मेहर के सामने आता तो मेहर बराबर उसे कोसा करती थी और बुरा भला कहा करती—परन्तु आज न जाने क्या सोचकर वह सरदार के बगल में आ बैठा।

आज तक सरदार ने मेहर को अपने पास बिठाने का कितना ही प्रयत्न किया था परन्तु वह टस से मस नहीं हुई थी। आज स्वयं अपनी इच्छा से वह उसके पास आ बैठी तो सरदार ने समझा कि अब वह रास्ते पर आ गयी है। उसके अधर धीरे- धीरे मेहर की ओर बढ़ने लगे।

वह घबड़ा उठी और मस्तिष्क पर कुछ बल लाकर बोली—"मैं तुम्हें नहीं चाहती— मुझे परेशान न करो!"

सरदार झुँझला उठा। उसकी काम-वासना जाग्रत हो उठी थी। उसने बलपूर्वक उसे छाती से लगा लिया और बोला—"देखता हूँ, अब किस तरह तू मुझसे बच सकती है। आज तक तेरी सब सुनता रहा लेकिन अब अपनी बात पूरी करके ही छोड़ूगा। तू अपने को समझती क्या है?"

सरदार की दृढ़ता देखकर मेहर को अपनी चेतना जैसे लुप्त होती मालूम पड़ी। वह एक बारगी चीख उठी।

चारपाई के नीचे पड़े हुए सुलतान से अब न रहा गया। उन्होंने झपट कर एक ऐसा धक्का दिया कि सरदार जमीन पर लुढ़क गया—परन्तु तुरन्त ही उठ खड़ा हुआ और एक क्षण के लिये अपने प्रतिद्वन्द्वी को आश्चर्यमिश्रित नेत्रों से देखा।

"तुम....तुम, एक अदने आदमी!"—सरदार ने लपक कर अपनी तलवार उठा ली।

मेहर चीख उठी।

जो सरदार रात-दिन तलवार से, खून से खेला करता था, उसका सामना सुलतान किस तरह कर सकेंगे?

सरदार के हाथ की तलवार विद्युत-सी चमक उठी। सुलतान कायर नहीं थे। भला जिसके अधिकार में एक विशाल साम्राज्य रहा हो, क्या उसकी भुजाओं में इतनी भी शक्ति न होगी कि वह एक डाकू का सामना कर सके।

सुलतान थोड़ा-सा पीछे हटे और निमिषमात्र में उसकी कसी हुई मुट्ठी सरदार की मलपट पर जा बैठी। सर चकरा गया। आजतक वह इस तरह पराजित नहीं हुआ था।

"काफिर कहीं का। निहत्थे पर वार करता है?"—तलवार बजाने का शौक है तो दे मुझे भी एक तलवार!" सुलतान ने कहा।

"नादान! खामख्वाह साँप से खेलने की कोशिश करता है!...लड़ने का शौक है?....ऐसा...तो लो, यह तलवार"—सरदार ने एक तलवार सुलतान के आगे फेंक दी—"हाँ आजा!... देख, मगर घर में बीवी बच्चे हों, तो अब भी खैर है"—

"मालूम हो गया कि आज मेरा शौक पूरा होगा" सुलतान ने कहा—"आज तक मैं ऐसे मौके की खोज में था कि कोई बहा-

दुर मुझसे तलवारबाजी का शौक करे। आज तुम मिल गये सरदार। देखना बच के आना। हाँ शाबास !"

मुलतान का वार भयानक था मगर वह उसे बचा गया।

खनाखन तलवारें बजने लगीं। दल के लोग भी कोलाहल सुनकर वहाँ आ पहुँचे थे मगर सरदार का संकेत पाकर वे सब अलग खड़े रहे।

"यह लो"—सरदार की तलवार दीवार पर झन्न से जा टकराई—"खबरदार, तलवार उठाने की कोशिश न करना।"

सरदार की तलवार दीवार से टकराकर जमीन पर गिर पड़ी थी मगर मुलतान ने उसे उठाने का अवसर नहीं दिया।

उसकी तलवार की नोंक सरदार की छाती से जा भिड़ी—"अब तुम हारे !"—मुलतान ने कहा।

"शाबास बहादुर !"—सरदार ने कहा। वह उस खूबसूरत नौजवान की बहादुरी देखकर बेहद खुश हुआ—"तुम बड़े दिलेर हो। मैं तुमसे बहुत खुश हूँ। तुम अपनी कहानी कह जाओ। तुम कौन हो ? यहाँ किस तरह आ पहुँचे ?"

मुलतान ने एक मनगढ़न्त कहानी सुना दी और अपना असली राज छिपाये रखा।

सुनकर सरदार बहुत खुश हुआ। बोला—"क्या कहते हो तुम, क्या तुम्हारा घर मकान कुछ भी नहीं है ? तुम दुनिया में अकेले ही हो ? तब तो ठीक है दोस्त ! अब तुम्हें नहीं जाने दूँगा। ऐसे बहादुर आदमी को चले जाने देना ठीक भी नहीं है। आज से तुम मेरे ही साथ रहा करो और मेरे काम में हाथ बटाया करो। मैं सब काम तुम्हारी राय से करूँगा।"

सुलतान कुछ देर तक सोचते रहे।

सोचते रहे कि सरदार का कहना ठीक है या नहीं। अन्त में उन्होंने सरदार का कहना ठीक समझा, क्योंकि वहाँ रहने से उन्हें

मेहर से मिलने का सदा अवसर मिला करेगा। उन्होंने सोचा कि जब तक मेहर को आजाद करने की कोई सूरत नहीं निकल आती तब तक यहीं रह कर दिन बिताये जाँय।

"मैं तैयार हूँ—" सुलतान ने उत्तर दिया—"मगर तुम मेहर से कुछ भी शरारत न कर सकोगे।"

● ●

मेहर अकेली बैठी थी, उस सुनसान मकान में। उसका हृदय रह-रहकर सुलतान की ओर आकर्षित हो जाता था।

आज सवेरे ही डाकुओं का समूह कहीं गया हुआ था। सुलतान भी उसी गिरोह के साथ थे।

मेहर न जाने क्या सोचती हुई अन्यमनस्क भाव से बैठी थी। दूर से किसी के गाने का स्वर सुनाई पड़ा।

"हैं! यह तो कादिर की आवाज जान पड़ती है—" मेहर ने कादिर का स्वर तुरन्त पहचान लिया, क्योंकि कादिर ही उस गरोह में एक ऐसा दयावान व्यक्ति था, जिसे मेहर से पूरी सहानुभूति थी। गायन-कला में उसकी पहुँच अच्छी थी।

गाने का स्वर मकान के द्वार तक आकर रुक गया। साथ ही खट-खटाहट की आवाज आई।

मेहर ने दौड़कर दरवाजा खोला। प्रसन्नचित्त कादिर अन्दर आया।

"सुना!"—कादिर प्रसन्नामिश्रित स्वर में मेहर से बोला—"आज सुलतान ने ही सरदार की जान बचाई, नहीं तो उस खौफनाक शेर ने तो उन्हें मार ही डाला था। ओह! यह सुलतान भी

कितना बहादुर है?....वाह रे नौजवान!...हाँ, बहादुर हो तो ऐसा!"—

"बात क्या है कादिर?"—मेहर ने पूछा।

"बात! सुनो! जंगल से आते हुए हम लोगों पर एक खौफनाक शेर ने हमला कर दिया। हम सब तो भाग खड़े हुए मगर सरदार को उसने दबोच लिया। हमारी आँखों के सामने अँधेरा छा गया, इस तरह जैसी काली रात। कुछ सूझता ही न था कि क्या करें। मगर वाह रे सुलतान! वाह रे उसकी हिम्मत! दौड़कर उस बहादुर ने उस भारी शेर को इस तरह उठा लिया जैसे खिलौना और उसे यों उठाकर जमीन पर पटक दिया, मानों वही शेर को पटक रहा हो।

मेहर हँसने लगी। फिर बोली—"क्या सरदार बहुत ज्यादा घायल हो गये हैं?"

"हाँ! बहुत ज्यादा, मगर अब बच जायेंगे। सुलतान उन्हें उठाकर ला रहा है मगर वाह रे सुलतान! हाथी-सा बल है उसके बदन में और चेहरा? चेहरा तो चमकता चाँद है। क्यों मेहर हँसती क्या हो? क्या मैं सब जानता नहीं हूँ? क्या मैं इतना अन्धा हूँ कि यह भी न जान सकूँ कि जब से वह आया है, तुम कितनी खुश रहती हो? इसके पहले मैं तुम्हें घण्टों समझाता था, मगर तुम्हारे चेहरे की गमगीनी न जाती थी....मगर मेहर, तुमने मुझसे यह बात छिपाई क्यों?"

कादिर की झिड़की ने मेहर की आँखों में आँसू ला दिये। कादिर बोला—"छिः बहन! रोती हो? मुझे बेरहम न समझना। मैं डाकू हूँ तो क्या, मेरा दिल मोम का बना है। क्या कहूँ बहन शुरू से ही मुझे सरदार ने पाला है, नहीं तो कभी का यहाँ से निकल गया होता।"

* * * *

"आह...आह !"—सरदार ने कराहते हुए करवट बदली।

"सरदार ! कैसी तबीयत है आपकी ?" सुलतान ने पूछा।

सरदार ने अपनी शिथिल आँखें ऊपर की ओर उठायीं—सुलतान ! मैं किस मुख से तुम्हारी तारीफ करूँ ? तुम मेरे भाई हो। तुमने मुझपर अहसान किया है, उसका बदला तुम्हें खुदा देगा। मैं तो अदना इन्सान हूँ। तुम्हारी भलाई का बदला देना ताकत से बाहर है।"

धीरे-धीरे गिरोह का प्रत्येक व्यक्ति सुलतान को चाहने लगा। सभी सुलतान से दो-दो बातें करने के लिए लालायित रहा करते थे।

सरदार भी सुलतान को जी-जान से चाहने लगा था मगर उसे मेहर और सुलतान की प्रेम-लीलायें, उनका घण्टों अकेले बैठकर बातें करना, अच्छा न लगता था।

जब से सुलतान वहाँ रहने लगे, तब से सरदार ने फिर कभी मेहर को तंग करने का प्रयत्न नहीं किया।

सुलतान गिरोह के हर एक आदमी को प्रसन्न रखने के लिये जी-जान से कोशिश कर रहे थे!

कादिर और सुलतान से खूब बनती थी। मेहर का प्रेम पाकर सुलतान सब कुछ भूल गये थे। मेहर से प्रेम के कारण ही सुलतान डाकुओं का साथ दे रहे थे। मगर बीच में मेहर की मुक्ति का प्रयत्न अवश्य करते जाते!

एक महीने के बाद—

सरदार बिलकुल स्वस्थ हो गया। उसने अपने सब आदमियों और सुलतान को बुलाकर कहा—"आज बहुत दिनों के बाद मेरी तबियत ठीक हुई है। अब मैं चाहता हूँ कि हम लोग किसी ऐसी जगह डाका डालें कि हमारी इतने दिनों की नुकसानी

पूरी हो जाय। इस काम के लिये मैंने सुलतान काशगर का महल चुना है?"

सुनते ही सुलतान चौंक पड़े। तो क्या यह सरदार उन्हीं के महल को लूटने की साजिश कर रहा है? मगर करते भी क्या? लाचार चुप हो रहे।

सरदार कहता गया—"मुझे पूरी तरह मालूम है कि सुलतान काशगर के महल में काफी रकम इकट्ठी है और अगर कोशिश करके हम वह रकम हाथ में कर सकें तो हमें कुछ दिनों के लिये आराम मिल जायगा। इधर सुनने में आया है कि सुलतान सल्तनत छोड़कर न जाने कहाँ चले गये हैं और तख्त पर इस वक्त नाकाबिल परवेज का कब्जा है। इसलिये हमें कुछ भी दिक्कत न उठानी पड़ेगी। जाओ, तैयारी करो।"

❀ ❀ ❀

जब से सुलतान काशगर सिंहासन छोड़कर चले गये हैं, वृद्ध, वजीर बराबर चिन्ताग्रस्त रहता है, क्योंकि उसे शाहजादे परवेज के रंग-ढंग अच्छे नहीं दीखते थे।

सुलतान का रंगमहल आजकल सूना पड़ा हुआ है। महल के बाह्य-भाग में वजीर ने अपने रहने का स्थान चुन रखा है ताकि महल के अन्दर, जितनी अपार धनराशि एकत्रित है, कोई उत्पाद न हो सके।

यों तो वजीर के लिए एक छोटा-सा महल अलग है परन्तु सुलतान के महल को एकदम सूना पड़ा हुआ देखकर, उसने वहाँ ही रहना ठीक समझा।

अर्धरात्रि के अवसान होने में कुछ ही समय शेष था कि वृद्ध वजीर की निद्रा अकस्मात् भंग हो गयी।

वह जल्द से पलंग पर उठ बैठा और कान लगाकर उस आवाज़ पर गौर करने लगा, जिसे सुनकर उसकी नींद टूटी थी।

उसने महल के अंतःपुर से कुछ आवाज सुनी, जैसे महल में बहुत से आदमी घुस आये हों और धीरे-धीरे बातें कर रहे हों।

सुनकर वजीर घबड़ाया नहीं। वह काफी जमाना देखे हुए था। शीघ्रता के साथ, मगर इस तरह की आवाज न हो वह उठ खड़ा हुआ और दरवाजा खोलकर बाहर के पहरेदार को जगाया। पहरेदार आँख मलता हुआ उठ बैठा।

वजीर ने उससे कहा—"मादू! महल में डाकू घुस आये हैं। तू जा जल्दी से और सिपहसालार से कह कि पाँच सौ सिपाहियों को लेकर महल का कोना-कोना घेर लें। बहुत आसानी से और आहिस्ते से यह काम हो। समझ गया? जा, जल्द!"—पहरेदार चला गया।

वजीर ने अपनी तलवार उठाई और अन्धेरे में ही वह दबे पाँव महल के अग्रभाग वाले हिस्से की ओर बढ़ा।

* * *

सुलतान कारागार के विलास-भवन का द्वार खुला और एक काली आकृति भीतर घुसी। उसके पीछे ही एक दूसरी काली आकृति भी।

पहली ने कहा—"तुम आ गये सुलतान?"

दूसरी आकृति बोली—"जी सरदार! हम लोग ठिकाने से पहुँचे हैं। मगर जरा धीरे से बोलिये, यह खास सुलतान कारागार का ख्वाबगाह है।"

"मगर तहखाने का रास्ता कहीं नहीं दीख पड़ता"—सरदार ने कहा।

दोनों तहखाने का रास्ता खोजने लगे। इस समय सुलतान की विचित्र अवस्था हो रही थी। उनको समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करना चाहिये। एक बार तो उनके मन में आया कि

वे शोर मचा कर सब डाकुओं को पकड़वा दें परन्तु तुरन्त ही उन्होंने एक दूसरा रास्ता सोच लिया।

इतने में एक आदमी घबड़ाया हुआ अन्दर घुसा और सरदार से बोला—"गज़ब हो गया सरदार! बाहर लोग जाग गये हैं। महल के चारों तरफ सिपाही समन्दर की तरह उमड़ पड़े हैं। अब हमारी खैर नहीं।"

"तुम घबड़ाओ नहीं" सरदार गम्भीरता पूर्वक बोला, क्योंकि हमेशा से ही इस तरह के खतरे उठाने का आदी हो गया था—"सुलतान अब क्या करना चाहिये?"

सुलतान मन ही मन वजीर की तत्परता और चतुरता देखकर बहुत प्रसन्न हो रहे थे।

वे बोले—"बेहतर होगा कि हम अपने सब आदमी यहीं बुला लें, फिर जो कुछ सामने आयेगा, सब साथ ही झेलेंगे।"

सरदार ने अपने सब आदमी अन्दर बुला लिये! बाहर चारों ओर टिड्डियों की तरह सिपाही फैल गए थे! डाकुओं की हालत चिन्ताजनक हो रही थी।

इतने ही में एक डाकू बोल उठा—"सरदार! अभी भागने का रास्ता है। बागवाले दरवाजे से।"

"हाँ-हाँ! वह रास्ता तो ठीक है। चलो सब लोग भाग चलें"—सरदार ने कहा।

सुलतान का ध्यान अभी तक बागवाले दरवाजे की ओर नहीं गया था। अब उनका भी ध्यान उस ओर गया। अगर लोग उधर से भागते तो उन्हें कोई न पाता। परन्तु सुलतान ने तो उन्हें पकड़ा देने का दृढ़ संकल्प कर लिया था! उन्होंने सरदार पर अह-सान लादने का एक अच्छा उपाय सोच रखा था।

सब डाकू भाग जाने के लिए दरवाजे की ओर बढ़े! सुलतान ने सबको हाथ से बाहर जाते देखा।

उन्होंने लपककर पास ही दीवाल में लगी हुई एक छोटी-सी कील दबा दी। उनकी इस कार्यवाही को कोई न देख सका।

कील दबाते ही विसाल-भवन के दरवाजे एक शब्द के साथ ही अपने आप-ही बन्द हो गये। कोई डाकू भाग न सका।

"यह क्या ?"—सरदार भी घबड़ा उठा।

"अब हम चारों ओर से बन्द हो गये हैं सरदार !" सुलतान ने कृत्रिम दुख के साथ कहा।

थोड़ी देर में वजीर के सिपाहियों ने आकर सब डाकुओं को बन्दी कर लिया।

सुलतान भी पकड़ लिये गये। उन्होंने अपने चेहरे का अधिकांश भाग साफे से छिपा रखा था।

दूसरे दिन—

दरबारेआम हुआ। राज्य के सभी बड़े-बड़े प्रतिष्ठित नागरिक और गण्यमान कर्मचारी उपस्थित थे।

सुल्तान का सिंहासन रिक्त था। नीचे एक छोटे से सिंहासन पर शाहजादा परवेज बैठा था, उससे कुछ नीचे वजीर का आसन था। वजीर की आज्ञा से कल के पकड़े हुये सब डाकू उपस्थित किये गये।

वजीर उठा और शाहजादे को अभिवादन कर बोला—"जहाँपनाह ! ये डाकू कल शाहंशाह के ख्वाबगाह में पकड़े गये हैं।"

"भाईजान के महल में घुस आये थे सब ? इसकी इतनी हिम्मत ?"—परवेज बोला।

वजीर डाकुओं के सामने आ खड़ा हो गया और उसने अपनी बूढ़ी आँखें सरदार की आँखों से मिला दीं—"क्यों ? सुलतान का खजाना लूटने चले थे ? बुड्ढे को भी भूल गये थे क्या ?

अकस्मात् वजीर की उड़ती हुई दृष्टि सरदार के बगल में खड़े हुए सुलतान पर जा पड़ी।

यद्यपि इस समय भी सुलतान के चेहरे का पर्याप्त भाग छिपा था फिर भी वज़ीर ने उन्हें कुछ पहचान लिया।

वजीर उन्हें गौर से देख रहा था। दूसरे ही क्षण उसके चेहरे पर मुस्कुराहट खेल गई। भला अपने सुल्तान को वह कैसे न पहचानता ?

किसी ने नहीं देखा कि सुलतान की दाहिनी आँख का एक कोना दबा और इतने से हा वजीर सब कुछ समझ गया।

आँख का संकेत पाते ही वह जान गया कि सुलतान अभी अपना भेद गुप्त ही रखना चाहते हैं।

अतः वह बोला—"तुम....तुम भी हो ?"

"हाँ वजीरे आज़म !" सुलतान ने कहा—"मैं वही हूँ, जिसने एक दिन जंगल में आपकी जान बचाई थी और आपने वादा किया था कि तुम जो माँगोगे मैं दूँगा। आज मैं आपसे अपना वही वादा पूरा करने की मिन्नत करता हूँ"—सुलतान की ये सभी बातें बनावटी थीं।

"क्या है तुम्हारी मुराद, बोलो ?" वज़ीर ने पूछा।

सुलतान ने कहा—"मैं चाहता हूँ कि मेरे साथ मेरे सब साथी भी छोड़ दिये जाँय।"

"छोड़ दिये जाँय !"—सम्मिलित कंठ से उपस्थित दरबारी चिल्ला उठे।

मगर वजीर की मुखाकृति शान्त थी। वह बोला—"यह मेरे अख्तियार की बात नहीं। ठहरो ! शाहजादे साहब से आरज़ू करता हूँ।"

वज़ीर शाहजादे से बोला—"जहाँपनाह ! इस शख्श ने मेरी जान बचाई थी, ऐसे वक्त जब कि मैं मौत के एकदम नजदीक था और एहसान भी इसने मुझपर बहुत किये थे। मैंने वादा किया था कि तुम्हारी मुराद पूरी करूँगा। आज ऐसे बेवक्त यह अपनी मुराद

पूरी कराने का ख्वाहिशमन्द है। अगर जहांपनाह का हुक्म हो तो...."

"वजीर !"—शाहजादा बोला—"तुम बुजुर्ग हो। अगर तुम चाहो तो इन्हें छोड़ सकते हो। सल्तनत का कोई नुकसान तो ये लोग कर नहीं पाये।"

वजीर ने कोर्निश की।

सब डाकू आजाद कर दिये गये। सरदार सुलतान पर बहुत प्रसन्न हुआ। उसने सुलतान को छाती से लगा लिया। सब डाकू उनकी बलैया लेने लगे। आज उन्हीं के कारण इतने आदमियों की जान बची तो भला वे लोग सुलतान की इतनी प्रतिष्ठा क्यों न करते ?

वजीर थोड़ी देर के लिये सुलतान से अकेले एक कमरे में मिला। वह सुलतान के पैरों पर गिर पड़ा और आर्त्तनाद कर उठा—"शाहंशाह आपकी यह हालत है ? आप...."

"घबराओ नहीं मेरे बुजुर्ग !" सुलतान की आंख भी तर हो आई—क्या करूँ ? मजबूर होकर इन डाकुओं का साथ दे रहा हूँ ?"

"क्या मजबूरी है जहांपनाह ?"

"दिल से अपने मजबूर हूँ। जब तक इनके साथ रहता हूँ तब तक दिल की जलन ठंढी रहती है।"

"ताज्जुब है !"—वजीर बोला।

अगर उसे मेहर और सुलतान की मुहब्बत की बात मालूम होती तो वह कभी ऐसा न कहता।

"मुझे अब इस सल्तनत से कोई दिलचस्पी नहीं रही वजीर !"

"नहीं शाहंशाह, आप ऐसा न कहें। आप तो हमारे सब कुछ

हैं। चमन की बहार बुलबुल से है—पौधों की खूबसूरती फूलों से होती है। जब बुलबुल और फूल ही न रहे तो चमन और पौधे किस काम के जहांपनाह! आप अब कहीं न जांय।"

"नहीं! मुझे जाना ही होगा वजीर!"—सुलतान ने कहा। वजीर ने बहुत समझाया परन्तु उनकी समझ में कुछ न आया।

वे सब डाकुओं का साथ लेकर चले गये! सकुशल लौटकर डाकुओं ने खूब आनन्दोत्सव मनाया।

● ●

कई महीने बीत गये।

सुलतान और मेहर का हृदय मिला तो ऐसा मिला, जैसे दूध और पानी। बिना एक दूसरे को देखे उन्हें चैन न पड़ता।

मेहर के प्रेम के कारण ही सुलतान उन डाकुओं का साथ दे रहे थे। सरदार उनपर सर्वदा प्रसन्न रहा करता था। उसे सुलतान की सभी बातें अच्छी लगती थीं परन्तु उनका मेहर से एकान्त में मिलना उसे खटकता था। सिराठ के और डाकू सुलतान को भाई-सा प्यार करने लगे थे। सुलतान ने अपनी मीठी-मीठी बातों द्वारा सभी को वश में कर रखा था।

"मेहर!" एकान्त देखकर सुलतान ने मेहर को टोका।

मेहर ठिठक गई। बोली—"क्या है सुलतान?"

"है कुछ नहीं, है तो सिर्फ दिल की जलन! प्यास...प्यास ने मुझे बेदम कर दिया है मेहर! प्यास मुझे जलाये डालती है। वह प्यास कैसी है? जानती हो? वह है मुहब्बत की प्यास, उल्फत की जलन, कितनी तकलीफदेह होती है।"

मेहर सुलतान की बात सुनकर खिलखिला पड़ी—"तुम भी जमीन आसमान की सैर करने लगते हो सुलतान।"

और अकस्मात उसी समय उसके सिर की ओढ़नी नीचे खिसक आयी।

काली घटा जैसे केश, कमर तक फैल गये।

सुलतान के हाथ आगे बढ़े। दूसरे ही क्षण वह सौंदर्य की प्रतिमा उनकी गोद में थी।

"सुलतान!"—दरवाजे पर से सरदार का कर्कश स्वर सुनाई पड़ा।

सुलतान ने घबड़ाहट में मेहर को छोड़ दिया। मेहर भी काँपती हुई एक ओर खड़ी हो गई। सरदार कमरे के अन्दर आ गया। उसने सब कुछ देख लिया था। उसकी आँखें अंगारे जैसी लाल थीं। क्रोध से उसके होंठ फरफरा रहे थे।

"सुलतान!"—उसके मुख से कठोर आवाज निकली परन्तु दूसरे ही क्षण उसके मुख पर मन्द मुस्कान की रेखा दीख पड़ी। उसने मुस्कराते हुए सुलतान के कन्धे पर हाथ रख दिया और अपनापन दर्शाते हुए बोला—"क्या हो रहा था सुलतान!...."

"कुछ तो नहीं...जरा मेहर से बातें कर रहा था"—सुलतान ने झेंपते हुए कहा।

"मगर बात इस तरीके से नहीं की जाती मेरे दोस्त!" सरदार व्यंगपूर्ण स्वर में बोला—"मेरे सीधेपन से बेजा फायदा उठाने की कोशिश न करो सुलतान! आओ मेरे साथ!"

सुलतान सरदार के पीछे-पीछे चले गये।

❀ ❀ ❀

उस दिन सुलतान की तबियत खराब थी, इसलिये वे डाकुओं के साथ न जा सके थे। मकान में केवल मेहर और सुलतान थे। मेहर सुलतान के पास बैठी हुई थी।

"कैसी तबियत है सुलतान ?"—मेहर ने पूछा।

"तबियत एकदम ठीक है मेहर! सिर्फ जलन मुझे परेशान कर रही है। मैं यहाँ बहुत खुश था और चाहता था कि पूरी जिन्दगी यहीं तुम्हारे साथ गुजार दूँ, मगर अब मालूम हो गया कि यह नामुमकिन है। सरदार को हमारी मुहब्बत अच्छी नहीं लगती-"

"एक घर में रहते हुए भी हमारी तुम्हारी मुलाकात नहीं हो पाती"—मेहर ने कहा—"सरदार के डर से मैं उफ् तक नहीं कर सकती। मगर क्या कहूँ सुलतान! तुम्हारी याद, तुम्हारी जुदाई मुझे इतना परेशान न करती...."

"तभी तो कहता हूँ मेहर कि मैं प्यासा हूँ। सामने पानी रखा है मगर पी नहीं सकता। मुझ-सा बदकिस्मत कौन होगा? तुम भी..." सुलतान ने एक गहरी साँस ली।

मेहर ने उनके कन्धे पर अपना सर रख दिया और बोली—"प्यारे सुलतान! कोई ऐसी तरकीब करो कि हमारी तुम्हारी मुहब्बत ताकयामत कायम रहे....बोलो! कोई जरिया सोचो। मैं सब कुछ तुम्हारे लिये कर सकती हूँ—जान भी दे सकती हूँ।"

सुलतान ने मेहर को अपने पास खींच लिया। बोले—"करूँ क्या? कुछ समझ में नहीं आता! आजकल सरदार बुरी तरह मेरे पीछे पड़ गया है। आज ही देखो, अगर मैं बीमारी का बहाना न किये होता तो वह मुझे कभी यहाँ न रहने देता?"

"हम दोनों एक दूसरे के लिए तड़पते रहते हैं मगर खुदा का कहर कि हमारी ख्वाहिशें....अब ज्यादा नहीं सहा जाता। चलो, निकल चलें यहाँ से कहीं दूर।"

आश्चर्य करते हुए सुलतान ने पूछा—"लेकिन कहाँ?....कितनी दूर?....किस जगह?"

"तुम जहाँ कहीं ले चलो, मैं चलने को तैयार हूँ मगर अब मैं यहाँ नहीं रह सकती। चलो अगर दुनिया भर में हमें कोई जगह

नहीं मिलेगी तो हम दोनों खुदकशी कर लेंगे। यह तो बस की बात है न ? सुलतान ! मेरे सुलतान !"

"अच्छी बात है, मैं तैयार हूँ ! मेरा घोड़ा मौजूद है। आओ ! उसी पर चढ़कर इसी वक्त भाग चलें। मौका अच्छा है"—सुलतान ने कहा—"चलो नहीं तो सरदार आ जायगा।"

"आ जायगा नहीं, आ गया।" दरवाजे पर से आवाज आई।

मेहर और सुलतान ने देखा कि दरवाजे पर क्रोध से काँपता हुआ सरदार खड़ा है।

"नादान दोस्त ! जान-बूझकर मौत को क्यों बुलाता है ?" सरदार आगे बढ़ आया और सुलतान के गाल पर तड़ाक से एक तमाचा जड़ दिया। सुलतान किंकर्तव्यविमूढ़ खड़े रहे।

"आओ मेरे साथ !"—सरदार ने फिर गरज कर कहा और दूसरे कमरे की ओर चल पड़ा। सुलतान भी उसके पीछे चले। जाते-जाते उनकी दृष्टि मेहर पर जा पड़ी। उन्होंने देखा, मेहर की बड़ी-बड़ी आँखों से मोती जैसी बूँदें झर रही हैं, मानों उनसे कह रही हों कि "सुलतान ! यह क्या हुआ ? हम मिल करके भी आज जुदा क्यों हो रहे हैं ?"

दूसरे कमरे में आकर सरदार सुलतान से बोला—"सुलतान ! तुम दोनों ने सोचा था कि सरदार हम दोनों से बेफिक्र हो गया है, मगर यह तुम्हारी भूल थी। तुमने मेरे साथ, इस गिरोह के सरदार के साथ दगा की है। इसकी सजा जानते हो क्या है ?"

"नहीं !" सुलतान ने लापरवाही से कहा मानों वे सब कुछ सहने के लिये तैयार हों।

सरदार कहने लगा—"इसकी सजा मौत है—समझे। मगर नहीं, मैं तुम्हारे लिये सजाये मौत तजवीज नहीं करूँगा, क्योंकि तुमने तीन बार मेरी जान बचाई है, मैं भी तुम्हारी जान बख्शता हूँ। मगर तुम अब यहाँ नहीं रह सकते। क्यों, जानते हो ?—नहीं

जानते ? अगर तुम यहाँ रहोगे तो मेहर को अपनी बनाने की कोशिश करोगे और इस तरह मेरी सारी उम्मीदों पर पानी फेर दोगे। मैं मेहर से मुहब्बत करता हूँ, मगर अब तक वह मुझसे नफरत करती आ रही है। मैं भी देखूँगा कि तुम्हारे चले जाने पर वह कैसे नहीं मुझे कबूल करती ?"

"सरदार !...."

"बोलने की कोशिश न करो। मैं तुम्हें छोटे भाई-सा प्यार करता रहा। मुझे दिली अफसोस है कि आज तुम्हारे जैसा बहादुर शख्स मेरे गरोह से चला जायेगा, मगर मैं क्या करूँ ? मुझे लाचार होकर ऐसा हुक्म देना पड़ रहा है—"

सरदार के स्वर में नम्रता के साथ साथ रूखापन था—"तुम अभी अपने जाने का इन्तजाम कर लो और फिर भूलकर भी इधर पैर न रखना....सुलतान ! गमगीन न बनो। मैं जानता हूँ कि तुम्हें यहाँ से जाते हुए बड़ी तकलीफ होगी, क्योंकि तुम मेहर को चाहते हो। मगर मेरे दोस्त, यह न समझना कि अब इस जिन्दगी में वह तुम्हें कभी मिल सकेगी ! वह मेरी है मेरी !"

❀ ❀ ❀

निमिषमात्र में यह खबर सारे गरोह में फैल गई कि आज सुलतान जानेवाले हैं।

मेहर ने भी यह सुना, कादिर ने भी सुना, सबने सुना।

"क्या सुलतान जा रहा है ?"

"हाँ ! सरदार ने उसे जाने का हुक्म दिया है"

"मगर कसूर उसका ?"

"न जाने क्या कसूर उसने किया है ?"

❀ ❀ ❀

"सुलतान आज सचमुच चला जायेगा"

"क्या कहा ?"

"बेचारा सुलतान आज हमें छोड़कर जा रहा है। कितना अच्छा आदमी था बेचारा और कितना बहादुर !"

❀ ❀ ❀

"तुम जा रहे हो सुलतान ?"

"क्या करूँ कादिर ! खुदा की यही मरजी है। रोओ नहीं। मैं जानता हूँ तुम मुझे बहुत चाहते हो, मगर समझ लेना कि हमारा तुम्हारा मिलना एक ख्वाब था। जा रहा हूँ, अपनी आँखें पोंछ लो। देखना, मेहर की देख-रेख करना"—

❀ ❀ ❀

सुलतान के चले जाने के समाचार से सभी डाकुओं को ठेस लगी। किसी की आँखें सूखी न रहीं।

सुलतान की बिदाई के लिये सब डाकू इकट्ठे हुए। सरदार भी आया। सुलतान बारी-बारी से सभी के गले मिले। कादिर को भी गले से लगाया।

कादिर रो रहा था। रोते ही रोते बोला—"तुम चले जाओगे सुलतान ! क्या सचमुच ?"

सुलतान का गला भर आया। वे कुछ न बोले, केवल अपने रूमाल से कादिर की गीली आँखें उन्होंने पोंछ दीं।

सबके पश्चात् सुलतान सरदार के गले मिले। सरदार का भी दिल रो रहा था मगर मेहर के लिए उसे सुलतान को दूर हटाना ही था।

"सरदार, मेरे सरदार !"

"सुलतान !"—सरदार के गले से रुकती आवाज निकली।

"चलते वक्त मेरी एक ख्वाहिश है...सिर्फ एक ! और वह भी बहुत आसान ! खुदा के लिये उसे पूरी कर दो सरदार !"

"क्या है तुम्हारी ख्वाहिश सुलतान ?" सरदार ने पूछा।

"चलते वक्त मैं सिर्फ दो मिनट के लिये मेहर से मिलने की

इजाजत चाहता हूँ। नहीं मत करना सरदार !" सुलतान ने प्रार्थना के रूप में कहा।

"मंजूर है।"

सुलतान ने मेहर के प्रकोष्ठ में प्रवेश किया। मेहर चारपाई पर पड़ी-पड़ी सिसक रही थी। सुलतान ने उसे प्रेमपूर्वक उठाया और कहा—"यह आखिरी मुलाकात है मेहर ! शायद ही अब इस जिन्दगी में मैं तुमसे मिल सकूँ।"

"तुम चले जाओगे सुलतान, मुझे यहीं अकेली छोड़कर ?" मेहर जोरों से रो पड़ी। उसने सुलतान की गोद में अपना सिर छिपा लिया।

"मेहर ! खुदा की मरजी कौन टाल सकता है। हम तुम मिले थे, सिर्फ बिछुड़ने के लिए ! हमारी तुम्हारी मुहब्बत हुई थी, सिर्फ तड़पने के लिए....ख्वाब था यह सब मेहर !" सुलतान ने कहा।

"नहीं-नहीं मेरे सुलतान ! ऐसा न कहो। यह ख्वाब नहीं सच है और सच होकर रहेगा। सुलतान, तुम फूल हो, मैं खुशबू हूँ। तुम कालिब हो और मैं रूह हूँ। मेरे महबूब ! मुझे भी ले चलो। मैं भी चलूँगी—"

"मैं तुम्हें ले चलने को तैयार हूँ मेहर ! मेरे बाजुओं में इतनी ताकत है कि...."

"मगर नहीं, मैं तुम्हारी जान खतरे में नहीं डालूँगी सुलतान ! मैं यूँही तड़पकर जान दे दूँगी। तुम जाओ ! मैं अपने लिए तुम्हारे ऊपर आफत नहीं आने दूँगी।"

सुलतान ने मेहर को हृदय से लगा लिया। मेहर ने अपना शरीर ढीला कर दिया और निश्चेष्ट होकर सुलतान के हृदय से चिपटी रही। दोनों प्रेमियों का वह मिलन कितना कारुणिक था।

"मुझे भूलने की कोशिश करना मेहर !" मेहर को अलग करते हुए सुलतान ने कहा।

"करूँगी"—यह शब्द मानों मेहर की कब्र से निकले—"यही आखिरी भेंट है मेरे सुलतान ! जाओ, रुक नहीं सकते तो जाओ ! खुदा की मरजी !"

सुलतान दरवाजे की ओर बढे। उनके कानों में अभी तक मेहर की यह आवाज गूँज रही थी—"यह आखिरी भेंट....रुक नहीं सकते तो जाओ, तुम जाओ !"

उधर दरवादे पर बैठा हुआ कादिर हिचकियां ले लेकर गा रहा था—

रुक न सको तो जाओ, तुम जाओ !
एक मगर हम सबकी है फरियाद.
कभी हमारी भी कर लेना याद।
हम तो तुम्हें न भूल सकेंगे,
तुम चाहे बिसराओ—तुम जाओ !

सुलतान बाहर आये।

मगर कादिर ने मानों सुना ही नहीं। उसकी आँखों से अविरल अश्रुधारा वह रही थी।

वह तन्मय होकर गा रहा था—

प्यारा वतन बिछुड़ता हो जब पंथी !
किसका हृदय न भर आता तब पंथी।
तुम ये आँसू देख हमारे,
कमजोरी न दिखाओ—तुम जाओ।

सुलतान बढ़ चले जंगल की ओर। उनका हृदय डूब रहा था। जंगल के पेड़ पत्ते उनकी हँसी उड़ा रहे थे और पश्चिम में सूर्य भगवान अस्ताचल की ओर जाने की तैयारी में थे।

कादिर के हिचकियाँ लेकर गाने की आवाज अभी तक कानों में आ रही थी। उसकी दर्दभरी आवाज से पेड़ों की पत्तियाँ तक काँप रही थीं।

वे आगे बढ़ते ही चले जा रहे थे परन्तु स्वयं उन्हें भी यह न मालूम था कि उनकी यह मंजिल कहाँ जाकर समाप्त होगी।

सन्ध्याकालीन बेला में, नीड़ों की ओर जाते हुए पक्षियों का समूह मानों पूछ रहा था—"ऐ मुसाफिर! कहाँ जायगा इतनी विकट परिस्थिति में?"

पेड़ पल्लव कह रहे थे—"परिश्रांत पथिक! लौट जा अपने घर को, सामने की ओर देख! क्षितिज के पास से काली अँधियारी घिरी आ रही है। जा, लौट जा!"

सुलतान का हृदय हाहाकार कर रहा था—"कहाँ जायँ? क्या करें?"

पश्चिमाकाश में अस्तप्राय सूर्य की किरणों के साथ इठलाती हुई रक्तरंजित लालिमा, सुलतान की ओर संकेत करके पूछ रही थी—"कहाँ है मंजिल तेरी?"

मगर सुलतान बढ़ते ही जा रहे थे। कादिर के गाने की आवाज अभी तक उनके कानों में गुनगुना रही थी—

"रुक न सको तो जाओ, तुम जाओ!"

● ●

कमर ने ठहाका लगाया और बोला—"तुम भी बड़े भोले हो शाहजादे! तुम्हें आसपास की कुछ खबर ही नहीं रहती?"

"आखिर बात क्या है दोस्त! मैं देख रहा हूँ कि तुम्हारे चेहरे पर खुशी और गम दोनों के निशान हैं, यह क्यों?" शाहजादा परवेज ने पूछा।

"बात ही ऐसी है शाहजादे !"—कमर ने कहा—"अब हमारे आराम के दिन आये।"

"क्यों, क्यों ?"—शाहजादे के चेहरे पर ताज्जुब की निशानी थी।

"सुलतान फिर आ रहे हैं !"

"क्या ?...क्या भाईजान फिर आ रहे हैं ?"—परवेज का मुँह पीला पड़ गया।

"हाँ ! आज तक जो तुम सल्तनत के पाने का ख्वाब देखते आ रहे थे, उसे बरबाद हुआ समझो। तुम्हारे सिपाही दिन रात सुलतान को खोजते फिरे, लेकिन कामयाब न हुए। आज सुलतान सही सलामत सल्तनत के पास आ गये हैं। वजीर बड़ा खुश है। उसने सुलतान के लिए शहर के बाहर खेमे लगवा दिये हैं। वहीं से सुलतान की सवारी निकलेगी, और शहर भर में घूमती हुई महल में दाखिल होगी। शहर में पूरी तैयारी हो रही है। सारी रियाया खुशी से फूली नहीं समा रही है। अब तो, तुम्हारी और साथ ही साथ मेरी भी ख्वाहिशें हमेशा के लिए सो जायगी"—कमर ने कहा। उनके अन्तिम वाक्य में व्यंग भासित हो रहा था।

"तो भाईजान की तबीयत अब दुरुस्त हो गई ?"

"मालूम तो ऐसा ही होता है। अब तुम्हारी क्या राय है ? मगर खैर, घबड़ाने की जरूरत नहीं। अभी बहुत से रास्ते हैं। यह लो बुड्ढा वजीर चला आ रहा है। मैं जा रहा हूँ, तुम इससे निपटो...."

कहकर कमर चलता बना।

वजीर ने आकर शाहजादे को अभिवादन किया और बोला—"आलीजाह ! खुदा के फजल से सुलतान सही सलामत आ पहुँचे हैं। उनके दिल की सारी परेशानी दूर हो गई है। शहर के बाहर

उनका खीमा गड़ा है। शहर में तैयारी करने का हुक्म मैंने दे रखा है। सब लोग सुलतान का वापस आना सुनकर बहुत खुश हैं...मैंने सोचा—आपको भी खबर देना जरूरी है, इसीलिए, देर से पहुँचा। माफ कीजियेगा।"

"मैं बहुत खुश हूँ वजीर कि भाईजान आ गये हैं। अच्छा हुआ कि मेरे नाजुक कन्धों से इस भारी सल्तनत का बोझ हट गया। तुम शहर भर में खूब तैयारी कराओ। खूब जलसे हों—समझे!"—परवेज ने प्रसन्नता दिखाते हुए कहा।

परन्तु उसका हृदय भीतर ही भीतर रो रहा था। अन्तर्प्रदेश में छिपी हुई भावनाओं और उसकी मुखाकृति पर प्रतिक्षण होने वाले परिवर्तन को देखकर वजीर ताड़ गया।

वजीर पुनः वापस चला गया। कमर फिर शाहजादे के पास बैठ गया।

शाहजादे ने उससे कहा—

"अब कौन-सी राय मुझे दे रहे हो। शुरू से ही मैं तुम्हारी राय पर अमल करता आ रहा हूँ।"

"इसके लिये मैंने एक बहुत अच्छी तरकीब सोची है, जो कभी नाकामयाब न होगी"—कहकर कमर ने शाहजादे के कान में न जाने क्या कहा।

सुनते ही परवेज उछल पड़ा। बोला—"यह बात तो....यह बात तो तुमने खूब सोची। यही ठीक होगा!"

❀ ❀ ❀

शहर के बाहर एक प्रशस्त मैदान में सुलतान का शिविर लगा हुआ है।

शिविर में एक पलंग पर बैठे हुए सुलतान बूढ़े वजीर से कह रहे हैं—"तुमने नाहक ही यह सब किया। मेरा आना कौन-सा ऐसी खुशी की बात थी कि तुमने सल्तनत भर में जलसे मनाने

की तैयारी कर दी है। मैं तो दुनियादारी से ऊबकर कुछ दिनों के लिये जंगलों की खाक छानता रहा। जब दिल को राहत मिली फिर आ गया—यह कौन-सी नयी बात है?"

"मगर आप रहे कहाँ इतने दिनों तक?"

"डाकुओं के गिरोह में रहा, लेकिन वहाँ से निकाल दिया गया। फिर कुछ दिनों तक इधर-उधर फिरा। मेरे दिल में औरतों से और दुनियादारी से जो नफरत पैदा हो गई थी, वह जाती रही और दिल को ठंढक मिल गई। आखिरकार मैंने सोचा, इधर-उधर न भटक कर आपही लोगों में जिन्दगी बिताऊँ। मैंने आपको खबर दी। आप मेरे रहने का इन्तजाम कर जलसे की फिक्र में लग गये, भला इसकी क्या जरूरत थी?"—सुलतान ने कहा।

"जरूरत!"—वृद्ध वजीर की मुखाकृति पर मुस्कुराहट की रेखा दौड़ गयी—"जरूरत क्यों नहीं थी शाहजादा! भला जिसके लिये हम दिन-रात रोते रहे, जिनके न रहने से फूली-फली हुई सल्तनत एकदम उजाड़ रहती थी, उसके आने से हमारे दिल को खुशी क्यों न हासिल हो!....मगर जहाँपनाह इस खुशी में भी गम के आसार नजर आ रहे हैं।"

"तुम्हारा मतलब?"

"मतलब मेरा यह है, जहाँपनाह मुझे माफ करेंगे कि आपकी जान लेने की कोशिश की जा रही है। मेरे खुफिया ने पता लगाया है कि जब आपकी सवारी शहर से गुजरने लगेगी, उसी वक्त कोई बेजा हरकत की जायगी कि शाहंशाह की जान का खतरा.... इस काम में किसका हाथ है, यह मुझे मालूम नहीं हो सका है, मगर जरूर इसमें कोई बड़ा आदमी शामिल है।"

"यह बात है? तब तो जलूस निकलना मुश्किल है। अगर

तुम कहो तो मैं यों ही महल तक चला चलूँ। सवारी निकालने की बात जाने दो, फायदा क्या है ?"

"नहीं शाहंशाह! सवारी निकलेगी और जरूर निकलेगी। बुड्ढे वज़ीर के रहते हुए किसकी मजाल है कि वह आपका बाल भी बांका कर सके। आप देखियेगा कि किस खूबी के साथ आपके दुश्मनों को शिकस्त देता हूँ। वे भी वाह-वाह कर उठेंगे अली-जाह!"—वजीर ने कहा।

❀ ❀ ❀

प्रजा ने शहर को सजाने में कोई कमी नहीं रखी। सारा शहर स्वर्गवत जगमगाने लगा। अपने बिछुड़े हुए सुलतान का आगमन सुनकर सारी प्रजा हर्षोत्फुल्ल हो उठी।

योजनानुसार निश्चित दिन को सुलतान की सवारी निकली। सल्तनत के सभी बड़े-बड़े नागरिक और पदाधिकारी जुलूस में सम्मिलित थे।

कई प्रकार के वाद्य-यन्त्र आगे-आगे बज रहे थे। उसके बाद सैनिक घोड़ों पर सवार, नंगी तलवारें लिये चल रहे थे।

जलूस के ठीक मध्य भाग में सुलतान राज्य के एक विशाल हाथी पर विराजमान थे। उनकी ग्रीवा में पड़े हुए बड़े-बड़े फूलों के गजरों ने उनके चेहरे का काफी हिस्सा ढंक लिया था। सुलतान ने उन गजरों को अपनी ग्रीवा से निकालकर रख देना अच्छा नहीं समझा। भला प्रजा की दी हुई भेंट का अपमान वे किस तरह करते?

जलूस में शाहजादा परवेज, शाह के पीछे वाली हाथी पर सवार था और वज़ीर शाहजादे की पीछे वाली हाथी पर।

शाहजादे का दोस्त कमर भी शाहजादे के बगल में बैठा हुआ जलूस की बहार देख रहा था। कभी-कभी उसकी सौन्दर्ययुक्त मुखाकृति पर मुस्कुराहट की एक अस्फुट रेखा खिंच उठती थी।

आज कमर और शाहजादा परवेज दोनों बहुत प्रसन्न थे, क्योंकि आज उन्होंने सुलतान की जान लेने का पूरा प्रबन्ध किया था और उन्हें आशा थी कि एक घण्टे के अन्दर ही सुलतान इस संसार से चल बसेंगे।

धीरे-धीरे आगे बढ़ता हुआ यह जुलूस उस जगह पर पहुँचा जहाँ गगनचुम्बी अट्टालिकाओं से आवृत्त एक छोटी-सी मसजिद पड़ती थी और उसके पीछे सघन वृक्षों का एक वृहदाकार परन्तु मनोरमा उद्यान था।

धाँय ! धाँय !! धाँय !!!

एकाएक तीन बार गोली छूटने का शब्द हुआ। साथ ही शाही हाथी पर जोरों की एक चीख सुनाई पड़ी और लोगों ने हैरत के साथ देखा कि सुलतान का सर पीछे की ओर लटक गया है।

सारे जलूस में कोलाहल मच गया। वजीर घबड़ा उठा।

परन्तु परवेज और कमर बाह्य रूप से दुःखी होते हुए भी भीतर से प्रसन्न थे। उनके सिपाहियों ने अपना काम पूरा कर दिया था और इस समय मृत शाहंशाह शाही हाथी पर पड़े थे।

रंग में भंग हो गया था।

परवेज घबड़ाई-सी सूरत बनाये वजीर के पास आया और रोता हुआ बोला—"यह क्या ? यह क्या हो गया वजीर ?"

"शाहजादे साहब !"–वजीर भी रो पड़ा–"खुदा की मरजी !"

सारे शहर में एक विचित्र प्रकार की उदासीनता छा गयी। अभी तक जो शहर प्रसन्नता और नाना प्रकार के विनोद में विभोर हो रहा था, थोड़ी ही देर में श्मशानवत् मालूम पड़ने लगा।

परवेज रोता हुआ चेहरा और हँसता हुआ दिल लेकर महल

को रवाना हुआ। कमर भी उसके साथ था। दोनों की अभिलाषाएँ पूरी हुई थीं।

ज्योंही परवेज महल के पास पहुँचा, उसने देखा—महल में पूर्ववत् आनन्दोत्सव मनाया जा रहा है और वाद्य-यन्त्र इस मस्ती के साथ बजाये जा रहे हैं मानों कुछ हुआ ही नहीं।

परवेज को आश्चर्य हुआ। वह बोला—"हैं, यह कैसी बात? गम के वक्त खुशी के आसार!"

न जाने क्यों परवेज और कमर का हृदय धड़कने लगा। अभी तक जो हृदय हँस रहा था, वह रो उठा।

या खुदा! या खुदा!! यह क्या बात है?

स्पन्दित हृदय से दोनों महल में घुसे। घुसते ही उन्होंने जो कुछ देखा, उससे उनका मस्तिष्क घूम गया।

उन्होंने देखा कि महल के द्वार पर स्वयं सुलतान खड़े हुए उनकी ओर देख रहे हैं।

परवेज घबड़ा गया। कमर भी आश्चर्य से चौंक उठा—"यह क्या? यह उनकी आँखों का दोष है या परमात्मा का प्रकोप!"

"आओ शाहजादे!" सुलतान ने पुकारा परवेज को।

परवेज उनके पैरों पर गिर पड़ा। सुलतान ने उसे उठाकर हृदय से लगा लिया। एक बाप के दो बेटे, एक रक्तविन्दु के दो हिस्से, एक आकृति के दो स्वरूप मिलकर एक हो गये।

लेकिन दोनों हिस्सों में, दोनों स्वरूपों में जमीन आसमान का अन्तर था। उनमें था एक स्वच्छ हृदय का महान् पुरुष और दूसरा था कलुषित हृदय का एक पतित।

"भाईजान!"

"शाहजादे! तुम्हें ताज्जुब हो रहा होगा...और है ही ताज्जुब की बात। मगर यह सब वजीर की कारगुजारी है। मुझे पहले से ही पता लग चुका था कि मेरी जान लेने की पोशीदा तौर से कोशिश

हो रही है। इसलिए उमने यह सब किया। शाही हाथी पर जो शख्स सवार था, वह मैं नहीं था। मैं तो जलूस उठने से पहले ही यहाँ आ पहुँचा था।"

"फजल खुदा का भाईजान! मैं तो रंजोगम से मुरदा हुआ जा रहा था"—परवेज ने कहा।

"ये तुम्हारे दोस्त हैं क्या?" सुलतान ने कमर की ओर इशारा करके पूछा।

"हाँ भाईजान! यह मेरे दोस्त हैं" परवेज ने कहा।

कमर ने सुलतान को झुककर अभिवादन किया। सुलतान स्थिर दृष्टि से कमर की मुखाकृति देख रहे थे, कदाचित उसकी मुखाकृति उनके किसी परिचित से मिलती-जुलती थी।

"मगर..." सुलतान कोई बात कहते-कहते न जाने क्यों रुक गये।

"जी हाँ, अभी इनसे नई दोस्ती हुई है..." परवेज ने कहा।

"मगर इस साजिश का पता अभी तक न चल सका कि किस शख्स ने इस तरह मुझे इस दुनिया से उठा देने की कोशिश की थी। वाकई उसकी हिम्मत काबिले तारीफ है।"—सुलतान बोले।

"जी! मैं जी जान से गुनहगार को खोजने की कोशिश करूँगा" परवेज ने कहा।

❀ ❀ ❀ ❀

"सब कुछ उलट फेर हो गया—"कमर ने हाथ मलते हुए कहा—"जो सोचा था, वह न हुआ....उलटे हमारी सारी तदबीरें बरबाद हो गईं, हमारी सारी उम्मीदें मिट्टी में मिल गईं—हुआ नहीं तो सिर्फ यही कि हमारा राज फाश न हुआ। अभी तक यह कोई जान न सका कि इस खौफनाक साजिश के पीछे कमर और शाहजादे का हाथ है।"

"सचमुच दोस्त ! हमारे सारे अरमान खाक में मिला दिये गये। हमें ऐसी शिकस्त दी गई कि ताबे जिन्दगी याद रहेगी। ख्वाब में भी मुझे यह उम्मीद न थी कि सुलतान इस कदर बाल-बाल बच जायेंगे। मगर यह वज़ीर भी कितना आफत का परकाला है। उसका दिमाग न जाने किस चीज का बना है। है भी इतना बुलन्द दिमाग कि उड़ती चिड़िया का पर पहचान लेता है"—परवेज ने कहा।

"वजीर सचमुच वजीर ही है। यह मेरे रास्ते का कांटा हो रहा है। खैर, देखूँगा कि कबतक सुलतान की खैर मना सकता है ? शाहजादे ! तुम घबड़ाओ नहीं। सुलतान आज बचे, कल बचे, कितने दिनों तक बचेंगे। कभी तो हाथ में आवेंगे"—कमर ने कहा।

"अब तो कुछ दिनों के लिए इस प्रकार की हरकतें बन्द ही रखो। और देखो कि भाईजान किस तरीके से रहते हैं और क्या करते हैं ?....हाँ ! आज मैंने एक अच्छा-सा गुलाम खरीदा है।"

"गुलाम ! गुलाम तो इतने सारे थे, फिर क्यों खरीद लिया ?"

"मुझे वह बहुत पसन्द आया। कहो तो बुलाऊँ। किसी भले घर का है। मालूम होता है कि गुलाम और बांदियाँ बेचने वाले डाकुओं ने उसे पकड़ कर बेच दिया है"—परवेज ने कहा।

कमर ने पूछा—"नाम क्या है उसका ?"

"उसने अपना नाम जहूर बताया है। कहता है कि वह अपने कबीले के सरदार का लड़का था—एक लड़की की मुहब्बत में पड़कर वह उसे ले भागा, मगर जंगल के डाकुओं ने उसे पकड़ लिया, साथ ही उस लड़की को भी। पकड़े जाने के बाद वह यहाँ लाकर बेच दिया गया।"

"किस्सा तो काफी दिलचस्प है"—कमर ने कहा।

"वह देखो आ रहा है।"

परवेज के कहने से कमर ने दरवाजे की ओर दृष्टि घुमाई और बोला—"हाँ, छोकरा तो अक्लमंद दिखाई पड़ता है। ठीक है....यहाँ तो आ छोकरे...हाँ! खड़ा हो जा सीधे....तू गमगीन न बन, इसे अपना ही घर समझ। रोता क्यों है? भूल जा बीती बातों को।"

• •

सच पूछिये तो सौन्दर्य-गरिमा गाँवों में ही देखने को मिलती है। देखिये न! जंगल के छोर पर बसा हुआ गाँव और उस गाँव के किनारे पर बना हुआ एक कच्चा-सा मकान क्या भला लग रहा है?

और जरा उस सुन्दरी पर भी दृष्टिपात कीजिये, जो घर के द्वार पर खड़ी होकर सामने की ओर देख रही है।

वह क्या देख रही है? कुछ समझा आपने? नहीं!—अच्छा देखिये! अभी-अभी एक नवयुवक अश्वारोही जंगल से निकला है और उसी गाँव की ओर बढ़ा आ रहा है।

सुन्दरी की दृष्टि अश्वारोही पर केन्द्रित है। अश्वारोही के वस्त्रादि राजकीय ढंग के हैं। यदि आप ध्यानपूर्वक देखें तो तुरन्त पहचान जायेंगे कि यह दूसरा कोई नहीं शाहजादा परवेज है जो प्रातःकाल ही आखेट के लिए निकला था और भटकता-भटकता इधर आ निकला है।

शाहजादा गाँव में घुसा और उस घर के पास आकर घोड़े से

उतर पड़ा। उसके ललाट पर श्वेत बूँदों की राशि, थकावट और व्याकुलता की द्योतक थी।

सुन्दरी को देखकर शाहजादे ने कहा—"मैं शाहजादा हूँ। शिकार खेलते-खेलते राह भूलकर इधर आ निकला हूँ। यहाँ कुछ देर तक आराम कर, थोड़ा पानी पीना चाहता हूँ।"

"आइये!" सुन्दरी ने मधुर स्वर में कहा और शाहजादे को अन्दर आने का संकेत किया।

शाहजादा मकान के अन्दर चला गया। सुन्दरी उसके बैठने के लिए एक मामूली चारपाई डालकर बोली—"हम गरीबों के घर में यही पलंग का काम देती है शाहजादे साहब!"

"बहुत पसन्द आई मुझे यह चारपाई!"—शाहजादा चारपाई पर बैठता हुआ बोला।

सुन्दरी पानी लेने दूसरी कोठरी में चली गई।

शाहजादा सोचने लगा—"यह जन्नत की हूर इस मकान में अकेली ही रहती है क्या? जरूर! कोई दूसरा तो दिखाई पड़ता नहीं....इसकी सूरत भी कैसी प्यारी है और कितनी भोली?"

इतने में सुन्दरी एक तश्तरी में कुछ ताड़ का गुड़ और एक गिलास पानी लेकर आ पहुँची। स्मित हास्य करते हुये उसने तश्तरी और गिलास शाहजादे के सामने रख दिया। उसकी मुस्कराहट, शाहजादे को बहुत भली लगी। बोला—"तुम क्यों इतनी तकलीफ उठा रही हो नाजनी?"

"घर आये मेहमान की खातिरदारी करना हमारा फर्ज है शाहजादे हुजूर"—इतना कहकर सुन्दरी की मुस्कराहट ने थोड़ा रंग पकड़ा।

उसकी इस मुस्कराहट ने शाहजादे को इतना अधीर बना दिया कि वह अपने हृदय को संयत न रख सका। वह आवेश में आकर उठ खड़ा हुआ और चाहा कि उसे बाहुपाश में कस ले।

परन्तु जब सुन्दरी शाहजादे की कलुषित भावना से अवगत हुई तो उसने कर्कश स्वर में उसे दूर रहने का आदेश दिया।

परन्तु शाहजादे पर तो कामान्धता का भूत सवार था, वह कब मानने वाला था। उसने आगे बढ़कर उस सुन्दरी का हाथ पकड़ लिया।

उसी समय द्वार खुला और एक तीस वर्षीय नवयुवक वहाँ खड़ा दिखाई पड़ा।

"फातिमा !"—नवयुवक ने पुकारा।

"मुझे बचाओ भाईजान !" सुन्दरी ने उस नवयुवक से कहा।

नवयुवक उसका सगा भाई था। वह आकर शाहजादे के सामने खड़ा हो गया। उसके काँपते हुए होठों से निकला—"अकेली औरत पाकर, उसकी अस्मत पर डाका डालते तुम्हें शर्म नहीं आती ?"

नवयुवक क्रोध से आगबबूला हो रहा था। वह बिना और कुछ पूछे उस पर टूट पड़ा। शाहजादे ने उसे रोकने के लिये अपनी तलवार की नोक उसके सामने कर दी। तलवार की नोक सामने देखकर उस नवयुवक ने अपने को सम्हालना चाहा परन्तु वह इतनी तेजी से आ रहा था कि अपने को सम्हाल न सका।

दूसरे ही क्षण शाहजादे की तलवार उस निरपराध नवयुवक की छाती में घुस गई। करुण चीत्कार के साथ वह पृथ्वी पर गिर पड़ा।

शाहजादे का विचार उस नवयुवक को घायल करने का न था, मगर करता क्या ? वह तो स्वयं ही उसकी ओर झपट पड़ा था।

शाहजादा तुरन्त मकान से बाहर निकल आया और अपने घोड़े पर चढ़कर महल की ओर रवाना हो गया। वह सुन्दरी

फातिमा अपने भाई की अवस्था देखकर मूर्छित हो जमीन पर गिर पड़ी।

* * * *

सुलतान सल्तनत का काम देखने लगे, मगर मेहर की याद उनके दिल से न गई। जब कभी उसकी याद आ जाती, उनका हृदय अधीर हो उठता था, कभी-कभी तो वे करवटें लेते ही लेते सुबह कर देते थे।

रात्रि के समय सुलतान पलंग पर उदास बैठे हुए थे। मेहर की याद ने उन्हें व्याकुल बना रखा था। वे नाना प्रकार के विचारों में बह रहे थे कि सहसा द्वार पर किसी शब्द की आहट सुन उन्होंने उधर देखा।

चौंक पड़े वे। बोले—"अजूरी तुम!"

द्वार पर सचमुच अजूरी खड़ी थी। उसके हाथ में मय का प्याला था। वह धीरे-धीरे आगे बढ़ आई।

सुलतान ने पूछा—"तुम कब आई अजूरी?"

"आज ही आई हूँ जहाँपनाह! ज्योंही आपका आना सुना, आपको शरबते-अनार पिलाने के लिए दिल बेताब हो गया।"

"अच्छा किया तुमने!"—सुलतान बोले। हाथ बढ़ाकर उन्होंने प्याला ले लिया—"मेरी दिलचस्पी के लिए तुम्हारा होना जरूरी था" सुलतान ने आज बहुत दिनों के बाद मदिरा पी। कई प्याले खाली हो गये। धीरे-धीरे उनके मस्तिष्क पर मदिरा ने प्रभाव डालना आरम्भ कर दिया।

वे बोले—"आओ अजूरी!" उन्होंने अजूरी को अपने पास खींच लिया—"बादशाहों की जिन्दगी भी बड़ी अबतर होती है। दिन-रात शराब और औरतों से खिलवाड़ होता है। कितना लुत्फ आता है? मगर दिल जो चाहता है वह मिलता नहीं।"

"ठीक फरमा रहे हैं आलीजाह!"—अजूरी ने कहा।

सुलतान बहक रहे थे—"दिल की हालत पूछ रही हो न ?... दिल में तो इतनी जलन है कि मानों आग लगी है। ताज्जुब करती हो ?....नहीं अजूरी ! मैं सच कहता हूँ। यों तो दुनिया के हर एक आदमी के दिल में जलन होती है। किसी के दिल में जलन है दौलत पाने के लिये तो किसी के जिगर में जलन है इज्जतो इशरत पाने के लिये—अपने दिलवर की मुहब्बत पाने के लिये और न जाने क्या-क्या पाने के लिये। यह सब तो जलन ही है। गरज यह कि दुनिया का कोई भी शख्स 'जलन' से बचा नहीं है....मेरे जिगर में भी जलन है। मेरा दिल पहले से अब ज्यादा परेशान है। सब कुछ है, मगर मेरा दिल तो यहाँ से बहुत दूर है...वहाँ ! मेहर के पास।"

"मेहर के पास ?"—अजूरी ताज्जुब से बोली।

"तब क्या तुम समझ रही हो कि मैं सिर्फ तुम्हें ही चाहता हूँ, तुम तो तितली हो। मेरे पास सिर्फ अपनी जवानी का सौदा लुटाने के लिए आई हो, मुहब्बत करने के लिए नहीं। मुहब्बत करने की शक्ल दूसरी होती है अजूरी ! तुम्हारे चेहरे की तरह उसमें बेशर्मी नहीं रहती, तुम्हारी तरह बेपर्द होकर वह मेरे सामने नहीं खड़ी हो सकती...और....एक प्याला और दो...ऐं ! तुम्हारा मुँह उदास हो गया ?...और यह क्या ? आँसू ?...वल्लाह ! यह भी कोई बात थी जो आँसू निकल आये...अच्छा ! यह लो ! यह लो !" और सुलतान ने अजूरी के अधरोष्ठ पर चुम्बन की एक हल्की मुहर लगा दी।

❀ ❀ ❀

'दरबारे आम' लगा था। अमीर-उमरा सभी अपने स्थान पर बैठे थे।

उसी वक्त प्रहरी ने आकर सुलतान को झुककर अभिवादन करते हुए कहा—"आलीजाह ! कुछ गाँववाले एक औरत के साथ

इन्साफ के लिए दरे-दौलत पर हाजिर हैं और शाहंशाह की कदम-बोसी की आरजू रखते हैं?"

"आने दो"—शाहंशाह ने कहा, प्रहरी चला गया।

थोड़ी ही देर बाद दरबार में, कुछ गाँववालों ने एक औरत के साथ प्रवेश किया। उनमें से चार आदमी एक शव को उठाये हुये थे। उस औरत को देखते ही शाहजादा परवेज, सर से पैर तक काँप उठा। वह और कोई नहीं—फातिमा थी।

"क्या है..." शाहंशाह ने पूछा—"क्या चाहते हो?"

"इस यतीम लड़की का इन्साफ चाहते हैं गरीबपरवर!—" एक ने कोर्निश कर कहा।

"वजीर आजम! दरियाफ्त करो इस लड़की से कि यह किस बात की फरियाद लेकर आई है" सुलतान ने हुक्म दिया।

वजीर के कुछ पूछने के पहिले ही गाँववालों ने वह शव लाकर सुलतान के आगे लिटा दिया। एक हाथ बढ़ाकर शव का ढंका हुआ मुँह खोल दिया।

उसका मुँह देखते ही शाहजादे की उल्टी साँसें चलने लगी।

"या खुदा! अब क्या होगा? इसका खून करने के जुर्म में सजायेमौत?" मन-ही-मन परवेज बड़बड़ा उठा।

"यह क्या! लाश?"—सुलतान बोले—"किसकी लाश है यह?"

"शाहंशाह! यह है इस गरीब लड़की के भाई की लाश! आपकी सल्तनत में ऐसा जुल्म, ऐसा अन्धेर हुआ? या खुदा!"—एक ने कहा।

वह लड़की रोती हुई बोली—"आलीजाह! जहापनाह! मैं अपने बेगुनाह भाई का इन्साफ कराने आई हूँ। इस दुनिया में मेरा अपना कहने के लिए सिर्फ यही मेरा भाई था—वह भी

आपके महल के एक शख्स के हाथों मौत का शिकार हुआ। या अल्लाह ! मैं कहीं की न रही।"

"बात साफ-साफ कहो। मेरे महल के किस आदमी ने तुम्हारे भाई को मारा है—किसने तुम्हारी दुनिया उजाड़ी है ? बोलो ! मैं कुरान और खुदायेपाक की कसम खाकर कहता हूँ कि तुम्हारा पूरा-पूरा इंसाफ करूँगा। तुमने सुना है न ! सुल्तान काशगर का इन्साफ है खून का बदला खून— जान के बदले जान ! बोलो कौन है वह शख्स, जिसने अपने को कहर सुल्तानी में आसीर करने की कोशिश की है...."

और उनकी दृष्टि, दरबार में उपस्थित लोगों में अनायास घूमने लगी, कदाचित यह पता लगाने के लिए कि कौन अपराधी है। आजतक सुलतान की आँखों ने कभी धोखा नहीं खाया था। अपराधी की सूरत देखते ही वह पहचान जाते थे।

"उस शख्स का नाम लेते हुए जमीन फट जायगी आलम-पनाह ! वह यहीं पर मौजूद हैं"—फातिमा ने सिसकियाँ लेते हुए कहा।

"यहीं पर मौजूद है ?"—शाहंशाह ने पूछा।

उनकी दृष्टि अभी तक हर एक दरबारियों की आकृति पर गौर से पड़ रही थी।

एकाएक उनकी दृष्टि शाहजादे पर आकर रुक गई। शाहजादा काँप उठा, साथ ही सुलतान भी। तो क्या शाहजादा ही—उनका भाई ही, मुजरिम है ? या खुदा ! यह कैसा कहर ? अपने सगे भाई को, जिसे वे अपनी जान से भी बढ़कर चाहते हैं, किस तरह सजाये मौत दे सकेंगे ?

शाहंशाह पर मूर्छना-सी आ गई, मगर उनकी मूर्छना को किसी ने भी लक्ष्य नहीं किया। सुलतान ने अपने हृदय में उठते हुए तूफान को क्षणमात्र में शमन कर दिया।

"तुम ! तुम शाहजादे खड़े हो जाओ"—सुलतान ने कठोर स्वर में कहा।

यद्यपि उनका हृदय जल रहा था तथापि इस समय उनके सामने न्याय की दीवार खड़ी थी, जिसे लाँघकर निकल जाना कठिन था। सारे दरबार में सन्नाटा छा गया। शाहजादा अपाद-मस्तक काँपता हुआ उठ खड़ा हुआ, रह-रहकर उसका मस्तिष्क घूम रहा था, शरीर का रक्त जैसे शरीर से विदा हो रहा था।

"तुमने खून किया है शाहजादे !"—सुलतान के स्वर में कंपन था और आँखों में क्रोध—"मेरे भाई होते हुए रियाया पर जुल्म करते शर्म नहीं आई ? अपनी रियाया पर गजब ढाते वक्त तुमने मेरे इन्साफ की याद न की ?"

"भाईजान !...."

"भाईजान न कहो। इस नापाक मुँह से ये पाक अल्फाज न निकालो।" सुलतान का इशारा पाकर चार सिपाहियों ने शाहजादे के हाथों में हथकड़ी भर दी—"जाओ ! कल फिर फैसला होगा।"

सिपाही शाहजादे को लेकर चले गये। सुलतान ने हृदय को पत्थर बनाकर देखा और सुना। अपने हृदय को, अपने रक्त माँस को न्याय की वेदी पर चढ़ते देखकर—अपनी ही छुरी से अपनी गर्दन अलग होने का विचार कर उनका हृदय जलने लगा। सचमुच सुलतान शाहजादे को चाहते थे--अपनी आत्मा से भी अधिक।

परन्तु परवेज ? परवेज तो...

"या परवरदिगार ?"—कहते हुए सुलतान मूर्छित होकर सिंहासन पर गिर पड़े। सारे दरबार में हाहाकार मच गया। वजीर घबड़ाया हुआ सिंहासन की ओर दौड़ा।

\+ \+ \+

"या परवरदिगार ! या खुदा ! रहम कर !....रहम कर तू.... इन्साफ ? उफ ! इन्साफ ही तो इस वक्त मुझे पामाल किये है"—अपने विलास-भवन में पलंग पर पड़े हुए सुलतान छटपटा रहे थे।

अजूरी भी मौजूद थी—

"क्या करूँ ?...परवेज ! यह तूने क्या किया ? तुझे अपने पर रहम न आई, अपनी रिआया पर रहम न आई—तो तुझे अपने बेकस भाई पर भी रहम न आई ? जरा सी देर के लिये तूने यह नहीं सोचा कि कौन-सा दिल लेकर मेरा भाई इन्साफ करेगा ?....उफ ! जलन !...कलेजा जला जा रहा है। नाहक ही मैं लौटकर यहाँ आया।"

"मेरे मालिक !...."

"अजूरी ! जाओ मेरे साथ तुम भी पागल न बनो। मैं पागल हो जाऊँगा...इन्साफ ! इन्साफ़ ! इन्साफ !...गला घोंट दो मेरा। कल अपने भाई को सजाये मौत देने के पहले ही मैं मर जाना चाहता हूँ....हाय ! परवेज ! यह तूने क्या किया ? जमीन के जिगर को कयामत की ठोकर से हिला दिया...."

"अदने आदमी न बनिये मेरे आका !" अजूरी ने सुलतान के कन्धे पर अपना कोमल हाथ रख दिया—"इन्साफ को खुदा ने सहने की ताकत बख्शी है शाहंशाह !"

और शाहंशाह की आँखों से अविरल अश्रु धारा बह रही थी।

दूसरे दिन—

दरबार लगा। अपराधी और न्याय के इच्छुक उपस्थित हुए। दरबार ठसाठस भर गया। सभी के मुखाकृति पर जैसे म्लानता छाई हुई थी। सभी अधीरता से शाहंशाह के आने की राह देख रहे थे और कान लगाये थे उन शब्दों को सुनने के लिये, जिनपर अभागे शाहजादे का दण्ड और छुटकारा निर्भर था।

एक घण्टा बीता, दूसरा भी बीता और तीसरा भी बीतने को आया, परन्तु सुलतान अभी तक दरबार में न आये।

वजीर घबड़ाने लगा। वह दरबार से उठ कर महल में गया। पता लगा, सुलतान विलास भवन से बाहर नहीं निकले हैं।

वजीर बेहद घबड़ा गया। वह दौड़ा-दौड़ा सुलतान के विलास-भवन में आया। देखा—सुलतान एक खम्भे के सहारे खड़े हैं। आँखें बन्द हैं। गालों पर आँसुओं की बूँदें झलक रही हैं।

पगध्वनि सुनकर सुलतान ने अपनी आँखें खोलीं—"वजीर!"

"शाहंशाह! ..दिल को सम्हालिये आलीजाह!"

"कैसे सम्हालूँ दिल को वजीर!" शाहंशाह रो पड़े।

"चार घण्टे दिन चढ़ आया है जहाँपनाह! दरबार लग चुका है। आज फैसला देना..."

"फैसला...अपने भाई की जिन्दगी का फैसला?....मैं मर क्यो न गया? या खुदा! क्या करूँ मैं?...मगर इन्साफ तो देना ही पड़ेगा वजीर! मैं मर जाऊँगा, अपनी जान दे दूँगा, मगर इन्साफ पूरा-पूरा करूँगा। शाही इन्साफ में धब्बा न लगने दूँगा। चलो!"

सुलतान ने ज्योंही दरबार में प्रवेश किया, चारो ओर मौत का-सा सन्नाटा छा गया।

सुलतान आकर सिंहासन पर बैठ गये। रात भर में ही उनके चेहरे की सारी रौनक काफूर हो गई थी। उनके बाल बिखरे हुए थे। मुखाकृति रक्ताक्त थी।

एक बार उन्होंने अपनी उड़ती हुई दृष्टि दरबार पर डाली, फिर वजीर से बोले—"मुकदमे की कारवाई शुरू करो।"

"मुकदमा शुरू करो।"

मुकदमा शुरू हुआ। अपराधी और उसके गवाहों के बयान हुए। शाहंशाह चुपचाप सुनते रहे।

वजीर सदा की भाँति मुकदमे की कार्रवाई करता गया। सब

कुछ हो चुकने पर वजीर ने आश्चर्य की मुद्रा में सुलतान की ओर देखा।

"खून का बदला खून और जान का बदला जान, यही शाही इन्साफ है"—सुलतान ने दृढ़ स्वर में कहा।

उनकी आवाज स्थिर था—"मुकदमें के सब पहलुओं पर मैंने गौर किया है और इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि शाहजादा बेशक गुनाहगार है। हाँ तो फरियादी के हाथ में तलवार दी जाय।"

"तलवार!" सारा दरबार काँप उठा।

तलवार दी जाय फातिमा के हाथ में? आखिर शाहंशाह का मतलब क्या है?

मगर किसको हिम्मत थी सुलतान के हुक्म में दखल देने की। वजीर भी आश्चर्यचकित-सा खड़ा था। सब चुप थे—परन्तु हृदय में खलबली मची हुई थी।

फातिमा के हाथ में तलवार दे दी गयी। उसने काँपते हुए हाथों से तलवार सम्हाली वह डर से थर-थर काँप रही थी। वह सोच रही थी—"या खुदा! क्या इस तलवार से मुझे परवेज का खून करना पड़ेगा।"

शाहंशाह उठ खड़े हुए और आकर फातिमा से चार गज की दूरी पर खड़े हो गये। उनके मुख से गम्भीर आवाज निकली—"फातिमा! बहुत गौर करने पर, मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि वाकई तुम्हारे साथ बेहद जुल्म किया गया है...."

सारा दरबार साँस रोककर इन अल्फाजों को सुन रहा था—

"परवेज ने तेरे भाई का खून किया है। सुलतान काशगर उसके लिए फाँसी की सजा तजवीज करते हैं।...और इधर देख मैंने सुलतान काशगर की हैसियत से तेरा इन्साफ किया है, मगर अब एक बेकस इन्सान की हैसियत से तेरे सामने खड़ा हूँ। तेरे हाथ में तलवार है, उसे मेरे कलेजे में रख दे ताकि भाई की मौत देखने

के पहले ही मैं इस दुनिया से कूच कर जाऊँ...तेरा इन्तकाम भी पूरा हो जाय।...परवेज ने तेरे भाई को मार डाला है, उसे तो फाँसी की सजा होगी ही, मगर इतने पर भी शायद तेरे दिल की जलन न जायगी। इसलिये मैं तुझे हुक्म देता हूँ कि तू भी परवेज के भाई का खून कर डाल। दोनों का भला होगा फातिमा! तेरे दिल की जलन मिटेगी और मैं भी भाई की मौत अपनी आँखों से न देख सकूँगा।....मैं भी इन्सान हूँ फातिमा! सुलतान बनकर मैंने इन्साफ किया, अब इन्सान बनकर तुझसे भीख माँगता हूँ कि अपने हाथ की तलवार से मेरा सीना चाक कर दे।"!

"या खुदा!" बुड्ढा वजीर गिरते-गिरते बचा।

"शाहंशाह!" सारा दरबार चिल्ला उठा।

फातिमा के काँपते हुए हाथों से छूटकर तलवार जमीन पर गिर पड़ी।

शाहंशाह गरज उठे—"बुजदिल न बन। उठा ले तलवार, अपने भाई के खून का इन्तकाम ले। परवेज ने तेरे भाई को मारा है, मैं उसका भाई तेरे सामने खड़ा हूँ—उठा तलवार, रख दे मेरे सीने पर। ताकि तेरा इन्तकाम पूरा हो जाय।...काँपती क्यों है?"

गरज पड़े सुलतान—"उठा ले तलवार! शाही हुक्म की उदूली न कर...चल...!"

फातिमा ने तलवार उठाकर अपने हाथ में ली। सारा दरबार उठ कर एकाएक खड़ा हो गया—"शाहंशाह! यह कैसा कहर?"—सब चिल्ला पड़े।

"भाईजान!..." बन्दी अवस्था में खड़ा परवेज चिल्ला उठा।

इस समय सभी की आँखें डबडबा आई थीं।

उफ! ऐसा पाकदिल इन्सान! मरहबा! मरहबा! भाई हो तो ऐसा! शाहंशाह हो तो ऐसा! इन्साफ हो तो ऐसा! आफरीं! सदआफरीं!

उपस्थित दरबारियों के मुँह से ये शब्द निकलकर उदासीन वातावरण में विलीन हो गये।

"हम अपनी फरियाद वापस लेते हैं शाहंशाह !"—सब गाँव-वाले चिल्ला पड़े—"हम इन्साफ नहीं चाहते। ऐसा इन्साफ हम नहीं चाहते—हम कुछ नहीं चाहते।"

"शाहंशाह ! अपने लिए नहीं, मेरे लिए नहीं, अपनी बेकस रियाया के लिये नहीं—तो कम से कम इन्साफ के लिए जिन्दा रहिये। आपके न रहने से इस कदर का इन्साफ कौन दे सकेगा शाहंशाह ?"—बुड्ढा वजीर बोला।

"जहाँपनाह !"—फातिमा ने कहा—"मैं आप की जान ले चुकी। मेरा पूरा इन्साफ हो गया ! शाहजादा परवेज को मैंने माफ किया। अब अपनी जान, मेरी ओर से, सल्तनत के लिए कायम रहने दीजिये।"

* * * *

"तुम छूटकर आ गये दोस्त।" कमर ने कहा।

"हाँ, आ गया !—" शाहजादा परवेज बोला—"भाईजान की ही इनायत है, नहीं तो मैं अब तक मौत का शिकार हो गया होता...जानते हो ! भाईजान ने मेरे साथ अपनी जान भी देनी चाही थी—ऐसा पाक फरिश्ता !"

"इन्साफ तो खूब हुआ कि सुलतान की भी जान बच गई और तुम्हारी भी।"—कहकर कमर ने अट्टहास किया।

"क्या हँसते हो ? अब मेरी आँखें खुल गई हैं। तुम मुझे बादशाह बनाने का ख्वाब दिखाते आ रहे थे, मगर मैं समझ गया कि बादशाह बनने की कुछ भी काबलियत मुझमें नहीं। ऐसा इन्साफ भला मैं कभी कर सकता था ?...तुम आज से मुझे भाईजान के खिलाफ कोई भी काम करने के लिए न कहना। एक

नेकदिल इन्सान के साथ बगावत करने से खुदा का गजब टूट पड़ेगा....हाँ अपनी दोस्ती अपने पास रखो"—परवेज ने कहा।

"शाहजादे साहब! तुम भी पूरे बेवकूफ निकले। काम को अधूरे में छोड़ देना तो तुम्हारी खास आदत है। सुनो! आजकल सुलतान अपनी जान से आजिज आ गये हैं, इसलिए तुम्हारे साथ ही वे अपनी भी जान देना चाहते थे—और तुमने उसका उल्टा ही मतलब निकाला। तुमने समझा कि सुलतान तुम्हें इतना प्यार करते हैं कि तुम्हारे साथ अपनी जान देने को तैयार हो गये। वल्लाह! खूब है दिमाग तुम्हारा! इसी दिमाग को लेकर मेरा साथ दोगे!....खैर, अपनी गलती दुरुस्त कर लो और यह लो जरा-सा शरबते अनार...।"

कहकर कमर ने शाहजादे के होठों से प्याला लगा दिया। शराब का दौर-दौरा चला पड़ा।

जब शाहजादे पर शराब का पूरा असर हो चुका, तो कमर ने उठकर भीतर से दरवाजा बन्द कर लिया।

● ●

शहर काशगार में एक पक्की सराय थी, जहाँ भिन्न-भिन्न देशों से आये हुए व्यापारी उतरा करते थे। प्रायः दास और दासियों के क्रय-विक्रय करने वाले व्यापारी वहाँ अधिक आते थे।

इस समय वहाँ ऐसा ही एक व्यापारी ठहरा हुआ है, जिसके पास पचासों दासियाँ और दास बिकने के लिए तैयार हैं। आज प्रातःकाल से ही सराय में बड़ी चहल-पहल और साज-सजावट

है क्योंकि आज स्वयं सुलतान काशगार वहाँ बाँदी खरीदने के लिए तशरीफ लाने वाले हैं।

चारों ओर एक विचित्र दृश्य उपस्थित है। सब बाँदियाँ नहला-धुलाकर आभूषित की जा रही हैं—पता नहीं आज किसका भाग्यसूर्य चमकने वाला है।

ठीक मध्यान्ह के समय सुलतान आये।

'सुलतान आये' का कोलाहल सराय भर में मच गया। सब यथायोग्य स्थानों पर सुलतान का स्वागत करने के लिए तैयार हो गये।

बाँदियाँ एक कतार में खड़ी कर दी गईं।

सौदागर सुलतान की प्रतीक्षा में हाथ बाँधकर खड़ा हो गया।

सुलतान आये और सौदागर ने कोर्निश की।

इस वक्त सभी बाँदियाँ चुपचाप, सर नीचा किये, खड़ी थीं! किसी की भी हिम्मत ऊपर आँख करने की नहीं होती थी।

सभी बाँदियाँ एक से एक खूबसूरत और कम उमर की हैं। उनके वस्त्रादि इतने महीन हैं कि उनके भीतर से, उनकी अनुपम रूपराशि छन-छन कर बाहर आ रही है। उनके शरीर का रोम-रोम दिखाई पड़ रहा है। यद्यपि सभी बाँदियाँ एक से एक बढ़कर खूबसूरत हैं, परन्तु आखीर वाली बाँदी तारों में चाँद जैसी मालूम पड़ती है।

सुलतान हर बाँदी के आगे आकर ध्यानपूर्वक उसकी सूरत देखते और उसकी खूबसूरती की तौल करते।

जिस बाँदी के आगे वे जाकर खड़े हो जाते, वह तो मानो गड़-सी जाती।

सब बाँदियाँ थर-थर काँपती हुई खड़ी थीं।

यह क्या?

आखीरवाली बाँदी पर दृष्टि पड़ते ही सुलतान चौंक पड़े।

उनका सम्पूर्ण शरीर सिहर उठा। क्यों न हो! जिस मूर्ति की पूजा वे सोते-जागते किया करते हों, जिस मेहर की सूरत अभी तक उनके हृदय पर अंकित हो—भला उसे ऐसी अवस्था में देखकर वे क्यों न चौंकते? फिर भी उन्होंने अपने हृदय को सीमोल्लंघन करने न दिया और उस बाँदी की ओर हाथ से संकेत किया।

जिस बाँदी को सुलतान ने पसन्द किया था वह सचमुच मेहर ही थी।

सुलतान का इशारा पाकर सौदागर बहुत खुश हुआ और मेहर के सामने आकर बोला—"सुना तूने, तुझे सुलतान ने पसन्द किया है?"

मेहर की आँखें पृथ्वी की ओर केन्द्रित थीं, उसने अभी तक सुलतान की ओर देखा भी नहीं था।

"तू अपनी ओढ़नी उतार दे। सुलतान तेरी जवानी का इम्तहान लेंगे"—सौदागर ने मेहर से कहा।

मेहर काँप उठी। या खुदा! यह शर्मनाक काम वह किस तरह कर सकेगी? इतने आदमियों के सामने वह कैसे अपना वक्षस्थल नंगा करेगी?

"नहीं कोई जरूरत नहीं!" सुलतान ने कहा।

मगर यह आवाज कान में जाते ही वह चौंक पड़ी। उफ! यह किसकी आवाज उसने सुनी? अपने सुलतान की? मेहर ने पहली बार सुलतान की ओर आँख उठाकर देखा, उसका सर चकरा गया। उसका प्यारा सुलतान, उसके गरोह का डाकू सुलतान—हाँ! वही इस वक्त राजकीय परिधान में उसके सामने खड़ा है।

मेहर को अपनी आँखों पर विश्वास न हुआ। वह स्वप्न में भी यह न समझ सकी थी कि साधारण मनुष्य की तरह उसका

गरोह में रहने वाला और सरदार की झिड़कियाँ सहनेवाला सुलतान काशगर हैं।

सुलतान ने समझ लिया कि मेहर भी उन्हें पहचान गई है, परन्तु उन्होंने इस समय अपनी किसी भी बात से यह प्रकट न होने दिया कि मेहर से उनकी पहले भी भेंट हो चुकी है।

मेहर ने सुलतान का यह रूखापन देख कर समझा कि कदाचित सुलतान अभी तक उसे पहचान नहीं सके हैं।

"इसे बाँदियों के महल में पहुँचा देना—"

और सुलतान घूम पड़े।

मेहर सोचने लगी—इतनी बेरुखी ?....फकीर की बात तो सच हुई। अब देखें, खुदा कौन सा खेल दिखाता है ?

मेहर बाँदियों के महल में पहुँचा दी गयी। दो महीने बीत गये। सुलतान ने फिर उसकी कोई खोज खबर न ली। पता नहीं कि वे उसे भूले थे या नहीं ?

मेहर प्रायः सुलतान की इस बेरुखी के बारे में सोचा करती। न जाने क्यों धीरे-धीरे उसके दिल में एक तरह का मीठा-मीठा दर्द होने लगा था। किसलिए ? यह अभी उसे नहीं मालूम हो सका था—फिर भी उसका दिल न जाने क्यों बेचैन हो उठता है।

रह-रहकर दुआ देनेवाले उस बुड्ढे फकीर की सूरत उसके नजरों के सामने नाचने लगती थी। फकीर ने जो कुछ कहा था, अभी तक उसे भूला नहीं था। उसने कहा था—"बेटी ! मैं तेरी किस्मत पढ़ रहा हूँ....तू सुलतान काशगार की महबूबा बनेगी.... मगर तू खुश न हो सकेगी...."

तो क्या सचमुच वह खुश न हो सकेगी ? क्या सचमुच उसकी भाग्य रेखा पत्थर की कलम से लिखी गयी गई है। मेहर के हृदय में उठने वाला तूफान बढ़ता जा रहा था। उसे दिन पर दिन अधिक बेचैनी मालूम होने लगी थी। न जा क्यों ?

उस दिन पहर रात गये सुलतान अपने विलासभवन में अजूरी के हाथ से शराब पीते हुए बैठे थे। यह छठवाँ जाम भरा गया था कि सुलतान एकाएक तन गये। उनके कानों में गाने की आवाज आई—

दिल में एक दर्द है, जो होंठ सिये बैठी हूँ।
क्या कहूँ, किससे कहूँ राज पिये बैठी हूँ॥
"दिल में 'य' है की तुम्हें बानिये-बेदाद कहूँ।
जी में आता है, तुम्हें मैं सितम-ईजाद कहूँ॥

नशे के झोंक में सुलतान ने कहा—"अभी बुलाओ! कौन-सी बाँदी इस वक्त ऐसा दर्दभरा गाना गा रही है! उसे क्या तकलीफ है"

"जहाँपनाह! यह वही नई आई हुई बाँदी है"—अजूरी ने कहा।

"नई आई हुई बाँदी?" सुलतान को अब मेहर की याद आई—"ओह, वह!—हाँ! बुलाओ उसे अभी! इसी वक्त! जाती क्यों नहीं? मुँह क्या देख रही है?"

अजूरी गई, थोड़ी देर में मेहर को लेकर वापस आई।

सुलतान ने एक उड़ती नजर मेहर पर डाली, फिर अजूरी से बोले—"इसके कपड़े बदलवाकर मेरे पास भेज दो।"

अनिच्छा रहते हुए भी अजूरी ने सब कुछ किया। मेहर को बहुमूल्य कपड़े पहनाये और इत्र आदि लगाकर उसे सुलतान के पास भेज दिया। मेहर आकर सुलतान के सामने खड़ी हो गयी। उसका हृदय तीव्र वेग से स्पन्दित हो रहा था, न जाने क्यों?

"पास आओ!" सुलतान ने कहा।

मेहर आकर उनके पास खड़ी हो गई। उस समय सुलतान पूर्णरूप से नशे में थे। उन्होंने मेहर को अपने पास खींच लिया और उससे इस प्रकार खिलवाड़ करने लगे, जिस प्रकार और

बाँदियों से किया करते थे। मेहर धड़कते हुए हृदय से चुपचाप सहती रही।

"वाकई तुम्हारी सुहबत मुझे बहुत पसन्द आई"—सुलतान बोले—"थोड़ी-सी शरबतेअनार मुझे पिलाना...."

मेहर ने प्याला भरकर सुलतान के आगे कर दिया।

सुलतान बोले—"उस तरह नहीं...देखो ऐसे।" सुलतान ने मेहर को अपने अंकपाश में कस लिया। मेहर ने काँपते हाथों से मद का प्याला सुलतान के ओठों से लगा दिया।

"तुमने तो मुझे पहचान लिया होगा मेहर!" सुलतान अब खुल पड़े।

"पहचान लिया था पहली ही नजर में शाहंशाह! मगर आपने अपना असली राज मुझसे छिपा क्यों रखा था?"

"जाने दो इन बातों को—बताओ कि मेरे आने के बाद क्या हुआ और तुम पर क्या-क्या बीती?"

"आपके आने के बाद सरदार ने मुझपर बेहद जुल्म किये मगर मैंने उसकी मुहब्बत कबूल न की। आपके चले आने के कुछ दिनों बाद कादिर भी आपकी खोज में गिरोह से भाग गया। तब से किसी ने उसकी सूरत नहीं देखी। वह आपको बहुत चाहता था और जब जाने लगा तो उसने मुझसे कहा था कि मैं सुलतान की खोज में जा रहा हूँ..."

"बड़ा अच्छा आदमी था बेचारा...!"

"जब सरदार लाचार हो गया तो उसने मुझे इस बाँदियों-वाले सौदागर के साथ बेच दिया, जहाँ से आपने मुझे खरीदा। अब आप मेरे मालिक और मैं आपकी बाँदी। आप भी तो मुझे इतने दिनों तक भूले रहे..."

"हम तुम कभी न जुदा हो सकेंगे!"—सुलतान ने कहा।

इसी समय मेघाच्छन्न नभ-मण्डल पर बाहर जोरों से बिजली

कड़क उठी। मेहर का कलेजा काँप गया। उफ़ उस फकीर की भविष्यवाणी यदि झूठी हो सकती....मेहर का शरीर शिथिल हो गया। मुखाकृति रक्ताक्त हो गयी।

"क्या हुआ ?—क्या हुआ ?"—कहते हुए सुलतान ने मेहर को और ज़ोर से कस लिया।

मेहर ने केवल इतना ही कहा—"किस्मत हम लोगों के साथ मजाक कर रही है मेरे आका !"

मगर सुलतान ने उसकी बात का कुछ भी मतलब न समझा। वे न जान सके कि मेहर की बातें एक भयानक घटना की ओर संकेत कर रही हैं।

❀ ❀ ❀

मेहर अब उनके खास महल में ही रहने लगी। सुलतान की आज्ञा से सब उसका आदर करने लगे।

यद्यपि उसका रहन-सहन, सभी मलका की तरह था, फिर भी उसके दिल में दिन-रात द्वन्द्व मचा रहता था। फकीर की बातें उसके हृदय में तूफान मचाये रहती थीं। वह बहुत प्रयत्न करती थी अपने हृदय को सम्हालने का परन्तु सब व्यर्थ, सारा महल मानों उसे काटने के लिये दौड़ता था। महल की चहल-पहल उसे अच्छी नहीं लगती थी। बस एक आकांक्षा उसके दिल को रह-रहकर मसल देती थी—वह यह कि पुनः अपने कबीले में चलकर जंगलों और पहाड़ों पर विहार करे।

कभी-कभी उसे जहूर की—उस अभागे की, जिसने उसकी मुहब्बत के लिये अपना सब कुछ न्यौछावर कर दिया था—याद आ जाती थी। उस अभागे नवजवान ने तो उसी के लिये अपना घरबार छोड़ा था।

मेहर की अवस्था दिन पर दिन बिगड़ने लगी। हाय ! जहूर उसे कितना चाहता था—दोनों किस तरह जंगल की गोद में

अपनी मुहब्बत की उलझन सुलझाये थे। कितना मजा था उस मुहब्बत में ? बस, इन्हीं चिन्ताओं में वह घुलने लगी।

अब सुलतान जब कभी उसके सामने आते तो न जाने किस विधिविडम्बना से उसका हृदय काँपने लगता था। आनेवाले अन्धकारमय भविष्य की सूचना मेहर को सुलतान की मुखाकृति पर दृष्टिगोचर हो जाती थी। ओह, यह अभागा सुलतान भी उसका पुजारी है। मगर यह भी बरबाद हो जायगा, फकीर का यही कहना है। उफ ! फकीर के अल्फाज कितने खौफनाक थे। याद आते ही मेहर भय से अपना मुँह ढँक लेती।

सुलतान ने भी मेहर की इस बिगड़ती हुई हालत पर गौर किया। वे मेहर को सच्चे दिल से चाहते थे। उन्होंने मेहर के मन बहलाव के लिये कुछ उठा न रखा, परन्तु उसपर आक्रमण करती हुई चिन्ता दूर न हुई। उसकी अवस्था देखकर सुलतान भी उदासीन रहने लगे, उनका भी किसी काम में मन न लगता था। उन्होंने शराब छोड़ दी थी—ऐश व इशरत छोड़ दी थी—सब कुछ छोड़ दिया था, केवल मेहर के लिये। कई बार उन्होंने मेहर से उसके कष्ट के बारे में पूछा भी, परन्तु मेहर से कोई स्पष्ट उत्तर न पाकर वे चुप रहे। दोनों रात को एक ही कमरे में सोते, मगर एक दूसरे से ज्यादा बात न करते। एक दूसरे के इतने पास रहते हुए भी मानों वे बहुत दूर थे।

मेहर का मन स्थिर न था। वह कभी अपने कबीले के बारे में सोचती और कभी अपने अब्बा और जहूर के बारे में। कभी दिल में आता कहीं भाग जाय। भाग जाय वहाँ, जहाँ रंज की पहुँच तक न हो—मगर वह भाग भी कैसे सकती थी ? उसी के साथ तो सुलतान के जीवन की बागडोर थी। उसके भाग जाने पर सुलतान का जीवित रहना असम्भव था। मेहर भी सब समझती थी। उसे सुलतान के साथ पूरी सहानुभूति और पूरी मुहब्बत थी, इसीलिये

वह उन्हें छोड़कर जाना भी नहीं चाहती थी। मगर वहाँ रहते-रहते उसका दिल जो जल रहा था, उसका कष्ट उसे असह्य था। वह कभी उन दिनों की बात सोचने लगती, जब कि सुलतान और वह, डाकुओं के गिरोह में रहा करते थे। किस तरह उन दोनों में मुहब्बत थी। अड़चन रहते हुए भी वे दोनों कितने खुश थे।

मगर यहाँ आते ही क्या हो गया? किसने उसकी दुनिया में आग लगा दी? किसने उसके दिल में इतनी जलन, तकलीफ पैदा कर दी? कैसे उसके हृदय में इतनी व्यथा, इतनी पीड़ा उत्पन्न हो गई कि अपने प्यारे सुलतान से दो बात कर लेना भी कष्टकर प्रतीत होने लगा?

मेहर फकीर को कोसती, मगर फकीर का इसमें क्या दोष था? उसने तो सिर्फ भाग्य की रेखा पढ़ दी थी—उसका नियंत्रण तो उसके अधिकार में था नहीं।

"मेहर..." उस दिन बड़ी कोशिश करके सुलतान ने मेहर को पुकारा।

"शाहंशाह!"

"तुम्हारी तबियत अभी तक ठीक नहीं हुई मेहर! तुम दिन पर दिन सूखती जा रही हो...."

"खुदा की कुदरत है मेरे आका! जिसके लिये यह दिल तड़पता था, उसे पाकर भी न पा सकी...."

"तुम यह कैसी बातें कर रही हो मेहर, तुम्हारी तकलीफ देखकर मैं भी अधमरा हो रहा हूँ। देखो, शराब मैंने छोड़ दी, हँसकर बोलना छोड़ दिया, औरतों से खेलना छोड़ दिया—सब कुछ छोड़ दिया मैंने! सिर्फ तुम्हारे लिए। मैं तुम्हें चाहता हूँ मेहर! मगर तुम यहाँ आकर न जाने कितनी जालिम बन गई हो। मेहर, मेरे दिल में जलन है...और जलन सभी के दिल में होती है। दौलत की जलन, इन्तकाम की जलन, खुदा ने न जाने कितनी

किस्म की जलन पैदा की है। मेहर! मैं प्यासा हूँ—तुम्हारे हाथ में पानी है मगर तुम मेरी प्यास बुझाना नहीं चाहती। अपनी तकलीफ भी नहीं बताती कि उसे दूर करने की कोशिश करूँ। आखिर इसका सबब—"

मेहर चुप रही। किस मुंह से, किन शब्दों में बेचारी मेहर बताये कि उसे क्या दुख, क्या तकलीफ, क्या जलन है? अपने दुख की बात, अपनी जलन की कहानी तो खुद वह अभी तक नहीं समझ सकी है।

● ●

"तुम तो बड़े ताज्जुब की बात सुना रहे हो दोस्त!"—कमर ने शाहजादे से कहा।

"बात ताज्जुब की भी है और खौफ की भी!"—शाहजादा कहने लगा—"आज महल भर में उसकी तूती बोल रही है। सभी उसका हुक्म मानते हैं। खुद भाईजान भी उसकी बात नहीं टाल सकते। भाईजान ने उसे बाँदी की तरह खरीदा था, मगर आज वह मल्का की तरह जिन्दगी बसर कर रही है। जब से वह आई है, तब से मैं गौर कर रहा हूँ तो भाई साहब की हालत अच्छी नहीं नजर आती। वे दिन पर दिन सूखते चले जा रहे हैं। किसी काम में उनका दिल नहीं लगता। उनकी वजह से महल में बीसों छोकरियों की जिन्दगी गुजर रही थी, मगर आजकल वे सब महल से निकाल दी गई हैं और भाईजान सिर्फ उसी एक छोकरी के पीछे पागल हुए जा रहे हैं। अपनी हमदर्द शराब को भी उन्होंने कत्तई छोड़ दिया है।"

"ऐसी बात ?"—कमर ताज्जुब भरी आवाज में बोला—"तो जरूर ही वह छोकरी बहुत खूबसूरत होगी। आखिर उसका नाम क्या है !"

"नाम है उसका मेहरून्निसा !"

"मेहरून्निसा !" परवेज का नया खरीदा हुआ गुलाम, जो दरवाजे के बाहर खड़ा हुआ भीतर की सब बातें सुन रहा था, एकदम चौंक पड़ा। उसका मस्तिष्क घूम गया और वह धड़ाम से पृथ्वी पर गिर पड़ा।

"जहूर !..." परवेज ने पुकारा गुलाम को।

गुलाम कराहता हुआ उठा और उदासीन भाव से सामने आकर खड़ा हो गया।

"क्यों रे, कैसी तबीयत है ?"—परवेज ने पूछा।

"अच्छी है आलीजाह !"

"देख ! मेरी बाँदी अभी इस सल्तनत की होनेवाली मलका को लेकर आती होगी। ज्योंही वह आये, अन्दर आ जाने देना।

गुलाम बाहर आकर बैठ गया। अन्दर फिर बातचीत आरम्भ हो गई। कमर बोला—"क्या तुमने उसे बुलाया है ?"

"हाँ ! मैंने सोचा, जरा तुम भी उसकी सूरत देख लो और उससे दो-दो बातें कर लो—"

"अच्छा ही किया" कमर ने कहा।

गुलाम दरवाजे पर बैठा हुआ बाँदी के लौटने की राह देख रहा था। थोड़ी देर बाद उसने देखा कि बाँदी के साथ मलिका-सी सजी हुई मेहर आ रही है। उस समय मेहर की खूबसूरती गजब ढा रही थी, फिर भी चाँद जैसे मुखड़े पर कालिमा की अस्फुट आभा विद्यमान थी।

मेहर जब पास आ गई तो गुलाम ने झुककर कोर्निश की। मेहर की नजर उसपर हठात् जा पड़ी।

यह क्या? यह कौन? मेहर का दिल काँप उठा। या खुदा! यह उसकी आँखें क्या देख रही हैं? उसकी मुहब्बत का शिकार जहूर आज गुलाम बनकर उसके सामने खड़ा है?

"तुम?—तुम जहूर!" उसके मुँह से काँपती हुई आवाज निकली।

जहूर धीमे से हँस पड़ा।

उफ्! जहूर की इस सूखी हँसी में प्रेम का कितना भयानक इतिहास छिपा है। वह भी कितनी कृतघ्न है कि जिसने उसके लिए लाखों कष्ट सहे, उसे उसने पत्थर की तरह ठुकरा दिया।

"उस फकीर की बात तो सच हुई मेहर!—" कहते हुए जहूर ने मुँह फेर लिया। उसकी आँखें डबडबा आई थीं।

मेहर को फिर उस फकीर की याद आ गई। फकीर के ही लफ्ज तो कहर के अल्फाज बनकर उसे जला रहे थे।

मेहर अपने को सम्हाल न सकी वह मूर्छित होकर गिरने ही वाली थी कि शाहजादा परवेज भीतर से आ पहुँचा। इज्जत के साथ उसने मेहर को कोर्निश की और भीतर लाकर पलंग पर बैठा दिया।

"क्या तबियत कुछ खराब हो गई?"—परवेज ने पूछा।

"नहीं शाहजादे! सब ठीक है। किसलिये मुझे याद करने की तकलीफ उठाई?"

"यूँ ही आपकी खिदमत करने की ख्वाहिश हो आई। ये हैं मेरे दिली दोस्त कमर! इन्होंने अभी तक आपको देखा नहीं था..."

इतने में ही गुलाम ने भीतर प्रवेश किया और कोर्निश करते हुए कहा—"वजीरे आजम आ रहे हैं...."

"वजीर? इस बेवक्त यहाँ कैसे?"—कमर ने आश्चर्य के साथ कहा—"दोस्त! तुम उनसे निपटो। मैं जाता हूँ।"

"आखिर तुम वजीर से कब तक डरते रहोगे ? बैठ रहो" — परवेज ने कहा।

तब तक वजीर भी आ गया। पहले उसने मेहर की, फिर शाहजादे को कोर्निश की और बैठ गया।

एकाएक उसकी निगाह कमर पर जा पड़ी।

वह चौंक पड़ा, मगर उसने अपने दिल को सम्हाला—फिर उसने कमर के मुँह की ओर देखा—फिर ! फिर !!

"आप कौन...."

"ये हैं मेरे दोस्त ?"—परवेज ने कहा।

"ओह !" वजीर आश्चर्य से बोला—"आपकी सूरत हमारी मलकयेआलम से बहुत मिलती-जुलती है। खुदा का कहर, वे न जाने किस हालत में होंगी ?"

"तुम्हारा ख्याल गलत है वजीर।"—परवेज ने कहा।

वजीर ने थोड़ा-सा उठकर कोर्निश की, मानों उसने अपनी गलती स्वीकार कर ली हो।

अब वह मेहर की तरफ मुखातिब हुआ। बोला—"शाहंशाह अभी तक ख्वाबगाह से बाहर नहीं निकले हैं। पता नहीं उनकी तबियत कैसी है ?"

"रात में तो तबीयत ठीक थी !" और मेहर उठ खड़ी हुई।

ज्योंही ख्वाबगाह में उसने प्रवेश किया, उसने देखा सुलतान तकिये में मुँह छिपाये पलंग पर लेटे हैं। सिसकने की आवाज भी आ रही है। उनकी यह हालत देखते ही मेहर का कलेजा मुँह को आ गया।

उफ् ! कैसे वह इस अभागे सुलतान की प्यास बुझाये ?

वह धीरे-धीरे आगे बढ़ आयी और सुलतान के बगल में बैठ गई। सुलतान ने आँसुओं से भीगा हुआ मुँह ऊपर उठाया। उनकी हालत देखते ही मेहर रो पड़ी—"मेरे आका...."

"मेहर ! मैं प्यासा हूँ..." सुलतान के गले से धीमी आवाज निकली। मेहर उठी। रत्नजटित प्याले में, चाँदी की सुराही से पानी उड़ेलकर, वह सुलतान के सामने आई।

"यह क्या ? पानी !"—सुलतान हँस पड़े—"मेरी प्यास इस ठंढे पानी से नहीं बुझेगी मेहर ! उसके लिए तो...."

मेहर सुलतान के पास बैठ गई ! सुलतान की गर्दन में हाथ डालते हुए बोली—"मेरे आका ! जरा अपनी हालत पर रहम कीजिये..."

"तुम अपनी हालत तो देखो मेहर !"

"मेरी किस्मत में यही लिखा है शाहंशाह !"

"तुम मुझसे आजिज आ गई हो ! जब मेरे पास आती हो, तब तुम्हारे चेहरे पर मुर्दनी-सी छाई रहती है ! मुझे ऐसा मालूम होता है कि तुम्हारे दिल में जरूर कोई तकलीफ है—जरूर कोई जलन है—मगर तुम मुझे बताती नहीं मेहर ! अगर तुम यहाँ से ऊब गई हो तो बोलो, तुम्हें फिर तुम्हारे अब्बा के पास भेज दूँ। मैं तुम्हारे लिए सब कुछ करूँगा—चाहे तड़प-तड़प कर मर जाऊँ..."

"ऐसा न कहिये मेरे आका ! खुदा के लिये ऐसा न कहिये। आप ही तो मेरी जिंदगी हैं। मैं आपको छोड़कर कहीं नहीं जा सकती..."

"जब से तुम आई हो, एक दिन भी तुम्हारे चेहरे पर खुशी न देखी। डाकुओं के गरोह में हम तुम कितनी खुशी के साथ मिला करते थे ? मगर उस वक्त मेरी प्यास न बुझी—और अब तुमको पाकर भी मैं प्यासा हूँ, शायद जिंदगी भर प्यासा ही रहूँगा। या खुदा !"—कहते-कहते सुलतान पलंग पर पड़ रहे।

मेहर घबड़ा उठी। उसने सुलतान के सिर को अपनी गोद में ले लिया और आँचल से हवा करने लगी।

❀ ❀ ❀

आज सुबह से ही सुलतान आखेट को गये हुए थे। मेहर पलंग पर पड़ी-पड़ी अपनी आन्तरिक व्यथा में करवट बदल रही थी। भयानक मानसिक चिन्ताओं ने उसके हृदय पर अधिकार जमा रखा था।

सुबह से मध्यान्ह हुआ, सन्ध्या हुई—परन्तु मेहर ने अभी तक एक दाना भी मुँह में न रखा था। वह चिंतातुर अवस्था में पलंग पर लेटी रही।

कुछ खटका हुआ।

मेहर ने सर उठाकर देखा और चौंक पड़ी।

दरवाजे पर इस समय जहूर खड़ा था। मेहर आश्चर्यमिश्रित मुद्रा में उठकर खड़ी हो गई—

"...जहूर, तुम यहाँ?"

"क्या करूँ मेहर!"

"क्यों आये तुम यहाँ?" मेहर ने विवश एवं शिथिल स्वर में पूछा! जहूर को देखकर उसकी जलन बढ़ती जा रही थी—"क्यों आये तुम जहूर?"

"अपने दिल से लाचार हूँ मेहर तुम क्या अब भी मुझसे खुश न हुई। क्यों इतना जुल्म ढा-रही हो? खुदा से तो डरो!"

"जाओ! तुम चले जाओ जहूर! तुम मुझे तड़पाने के लिए यहाँ आये हो तुम मुझे जलाने के लिए यहाँ आये हो—तुम क्यों खड़े हो यहां? किस खराब घड़ी में हमारा-तुम्हारा साथ हुआ था? जाओ, मैं तुमसे नफरत करती हूँ...."

"नफरत करती हो?"—जहूर ने आगे बढ़कर, मेहर का हाथ पकड़ लिया।

मेहर के पैर उस समय काँप रहे थे। उसका सारा शरीर सुन्न-सा होता जा रहा था।

जहूर कहता गया—"अपने दिल से पूछो मेहर कि तुम मुझसे

नफरत करती हो या मुहब्बत! सूरत देखो अपनी! तुम्हारी सूरत ही कह रही है कि तुम्हें मुझसे मुहब्बत है।"

"जहूर! खुदा के लिए चुप रहो"—कहती हुई मेहर जमीन पर गिर पड़ी।

जहूर ने आगे बढ़कर उसे उठा लिया। बोला-"मेहर! बोलो! तुम मुझसे मुहब्बत करती हो या नहीं?"

इसी समय बाहर स्वर में कोई गा उठा—

हाय? क्या पूछते हो दर्द किधर होता है,
एक जगह हो तो बताऊँ कि इधर होता है।

बेचारा कादिर, डाकुओं के गिरोह का वही गायक आजकल अपने दर्दभरे गाने गाता हुआ इधर-उधर फिर रहा था। जब सुलतान गरोह से चले आये तो कादिर का दिल भी वहां न लगा।

अवसर देखते ही एक दिन वह भाग खड़ा हुआ। इसके बीच, वह एक दिन छिपता हुआ गरोह तक गया था, मेहर से मिलने के लिए। मगर उसे पता चला कि मेहर भी यहां से चली गई है तब से वह दरबदर अपने गाने गाता हुआ घूम रहा था—सुलतान और मेहर की खोज में घूमता-घूमता वह आज आ निकला था।

"हैं! यह तो कादिर के गाने की आवाज है"—मेहर आश्चर्य बोली—"कोई बुला दो उसे...कोई भी नहीं है जिसे भेज सकूं। खुदा भी मुझसे मजाक कर रहा है....कोई बुलाओ उसे.... बुलाओ..." मेहर की साँस जोरों से चलने लगी।

"वह बहुत दूर निकल गया मेहर! मैं उसे कैसे बुलाने जाऊँगा? छिपकर यहाँ आया हूँ न"—जहूर ने कहा।

मेहर के हृदय में इस समय भयानक द्वन्द्व मचा हुआ था।

वह बोली—"मैं सच कहूँगी जहूर! मैं तुम्हें चाहती हूँ, मुझे तुमसे मुहब्बत है—और....और मुझे सुलतान से भी मुहब्बत...."

"क्या कहा? दोनों से मुहब्बत!" जहूर आश्चर्य के मारे बोला।

"हाँ जहूर! आज सब राज तुम पर खोल दूँगी! मैं तुम्हें चाहती हूँ, सुलतान को भी चाहती हूँ—दोनों से मुहब्बत है। यही फिक्र मुझे दिन-रात जलाती है। मैंने बहुत कोशिश की अपने को सम्हालने की, मगर सब बेकार। मैं ऐसे खौफनाक दर्द में फँस गयी हूँ कि उसका दूर होना गैरमुमकिन है। अब यह मेरी जान लेकर ही रहेगा।"

"या खुदा! यह मैं क्या सुन रहा हूँ?" जहूर ने एक ठण्डी साँस ली—"भला दो शख्स को कोई एक-सी मुहब्बत कर सकता है? मेहर तुम मुझे भुलावे में न डालो।"

"नहीं जहूर! मैं ठीक कह रही हूँ?....मेरा दिल क्यों जला जा रहा है? मेरे बदन का खून क्यों पानी हुआ जा रहा है....इसका सबब मेरे दिल से पूछो—मेरी सूरत से पूछो। मेरे दिल में मुहब्बत की जलन है—मगर मुहब्बत बड़ी खौफनाक है। जाओ मुझे न छेड़ो। इस जिन्दगी में तुम मुझे नहीं पा सकते—हां! नहीं पा सकते"—मेहर की हालत अबतर होती जा रही थी—"जाओ! जाते क्यों नहीं? मैं तुम्हारी नहीं हो सकती। मैं सुलतान की हूँ, सुलतान की। मैं सुलतान को चाहती हूँ। तुमसे नफरत करती हूँ—तुम जाओ।"

"ऐसा न कहो मेहर मेरा कलेजा टुकड़े-टुकड़े हुआ जा रहा है, तुम्हें नहीं छोड़ूँगा। आओ हम तुम कहीं भाग चलें"—

"भाग चलूँ? तुम्हारे साथ? जान से अजीज सुलतान को तड़पता हुआ छोड़कर?—यह गैरमुमकिन है जहूर! अपने लिये मैं सुलतान को तकलीफ नहीं दे सकती। तुमसे ज्यादा वे मुझे

चाहते हैं—जाओ तुम, मैं यूँही जलूँगी—मगर सुलतान को तकलीफ न दूँगी—"

"मेहर !" कहते हुए जहूर ने मेहर को अपने अंक में कस लिया। मेहर का शरीर उस समय शिथिल हो रहा था।

बातचीत का सिलसिला कुछ ऐसा रंग लाया कि किसी को आसपास की सुध ही न रही।

जहूर और मेहर दोनों में से किसी ने इस बात पर ध्यान न दिया कि दाहिनी ओर की दीवाल का एक हिस्सा धीरे से खुल गया है और उस छिपे दरवाजे पर स्वयं सुलतान काशगर खड़े-खड़े उनकी सारी लीला देख रहे हैं।

"समझा !" सुलतान के मुँह से गम्भीर आवाज निकली।

मेहर और जहूर चौंककर उठ खड़े हुए। दोनों थर-थर काँपने लगे ! जहूर ने सुलतान को कोर्निश की—और मेहर ने भी !

"समझा !" कहते हुए सुलतान आकर पलंग पर बैठ गये। "मेहर ! आज तुम्हारा राजे दर्द समझ लिया" सुलतान की आकृति गम्भीर हो गई—"तुमने मुझसे अपना राजेमुहब्बत छिपाने की कोशिश की थी, मगर आज मैं सब कुछ जान गया"—सुलतान जहूर की ओर अभिमुख होकर बोले—"खुशकिस्मत नौजवान ! तुझे मेहर चाहती है—मगर मेहर, तुमने मुझसे ऐसा छल क्यों किया ?"

"मेरे आका !"—मेहर चीख पड़ी—"ऐसे अल्फाज मुँह से न निकालिये—"

"मेहर ! मैं बहुत खुश हूँ, बहुत खुश हूँ मैं। आज मेरे दिल का बोझ हल्का हो गया ! अब तुम दोनों एक होकर आराम की जिन्दगी बसर करो—मैं प्यासा ही भला हूँ मेहर ! किसी कदर अपनी मायूसीभरी जिन्दगी की घड़ियाँ काट ही लूँगा।"

"मेरे आका ! मेरे मालिक !" मेहर ने सुलतान को अपनी

फूल-सी बाहों में जकड़ लिया—ऐसा न कहिये मेरे मालिक ! आप मुझे समझने में भूल कर रहे हैं—मैं आपको चाहती हूँ—हमेशा चाहती रहूँगी—मगर मैं अपने दिल से मजबूर हूँ...उफ् फकीर के वे खौफनाक अल्फाज ? या खुदा ! या इलाही ।"

सुलतान ने मेहर को पकड़ लिया, नहीं तो वह बदहोश होकर गिर ही जाती—

"मेहर ।" पुकारा सुलतान ने ।

"मेरे आका !"—मेहर ने अपना भराया हुआ मुँह ऊपर उठाया—"इस गुलाम को अभी यहाँ से चले जाने का हुक्म दीजिये ।"

"जहूर ! जाओ । तुम यहाँ से अभी चले जाओ ।"

जहूर धीरे-धीरे कमरे से बाहर हो गया ।

सुलतान बोले—"मैं तुम्हें अभी तक नहीं समझ सका मेहर ! तुम जाने कैसी औरत हो —औरत हो या हूर !"

"शाहंशाह ! मेरी तरफ से कोई बुरा ख्याल दिल में न लाइये । मैं गरीब हूँ, आपको मायूस देखकर मैं मर जाऊँगी मेरे मालिक ?" मेहर ने सुलतान के वक्षस्थल पर अपना सर रख दिया ।

सुलतान ने उसे अपने अंक में समेट लिया । दो आत्मा, दो शरीर मिलकर एक हो गये, परन्तु इस समय भी मेहर का हृदय जल रहा था ।

"तुम्हारे दिल में न जाने क्या दर्द है मेहर !" सुलतान बोले—"अगर मैं जान पाता तो उसे आराम करने के लिये जमीन आसमान एक कर देता ! मगर तुम्हारी खामोशी मुझे गर्क-दरिया कर देगी । मेहर ! मेरे दिल की मल्का ! अगर तुम्हें अपने ऊपर तरस नहीं आती, तो कम से कम मेरी हालत पर रहम करो । खुदा के लिये तुम अपना राजेदर्द मुझे बता दो ।"

"जान से अजीज सुलतान ! आप मुझ नाचीज के लिये क्यों इस कदर मायूसी के शिकार बनते हैं ? मुझ जैसी गरीब बाँदियाँ तो आपके दरे दौलत पर शबेरोज आया करती हैं—फिर क्यों मेरे लिये इतना परेशान होते हैं ?"—मेहर ने कहा।

सुलतान ने उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया बोले—

"मेहर ! तुम बाँदी हो और मैं सुलतान—मैं यह जानता हूँ, मगर दिल तो सिर्फ मुहब्बत देखता है ! मेरे नजदीक मल्का से तो तुम जैसी बाँदी लाख दरजे अच्छी है।"

"फजल है खुदा का शाहंशाह ! कि आप मुझ नाचीज के लिये इस कदर हमदर्दी रखते हैं—काश ! मैं भी आपको खुश रख सकती ?" कहकर मेहर ने एक ठंण्ढी साँस ली।

सुलतान बोले—"मेहर ! तुम अपने दिल को सम्हालने की कोशिश करो। मेरी ओर देखो ! मैं बदकिस्मत सुलतान अभी तक प्यासा ही हूँ। इतनी सब ऐश की चीजें रहते हुए भी मैं सिर्फ तुम्हारी शमये-सूरत का परवाना हो रहा हूँ। मगर तुम तो जब से यहाँ आई हो, बराबर मेरी परेशानी की बायस हुई हो, खुदा की मरजी।"

●

मेहर की अवस्था में कोई परिवर्तन न हुआ।

मेहर जानती थी कि वह जहूर को भी चाहती है और सुलतान को भी—इन दोनों की मुहब्बतों ने उसे परेशान कर रखा था। इसके अतिरिक्त और बहुत-सी बातें उसके मस्तिष्क में चक्कर काट रही थी।

कभी-कभी अर्धरात्रि के समय मेहर की निद्रा भंग हो जाती और उसका हृदय इतना विचलित हो उठता कि वह उद्विग्न हो जाती। कभी-कभी वह अपनी अंगुली में पड़ी हुई बहूमूल्य हीरे की अंगूठी की ओर देखती और सोचती कि इसी के द्वारा अपने भाग्यहीन जीवन का अन्त क्यों न कर दूँ? परन्तु सुलतान का मुख देखते ही अपना विचार बदल देती।

❀ ❀ ❀ ❀

"आज की रात हमारे काम के लिए अच्छी है दोस्त!"—कमर ने शाहजादा परवेज से कहा—"यह देखो—काली अंधियारी रात, आसमान में बादल के बड़े-बड़े टुकड़े—जोरों से बहती हुई हवा की खौफनाक सनसनाहट, ये सब चीजें हमें मन्जिले-मकसूद तक पहुँचाने में मदद देंगी। आज अपने इन्हीं हाथों से सुलतान से बदला लूँगा—खून करूँगा"—कहकर कमर ने एक राक्षसी हँसी से प्रकोष्ठ की दीवारों को गुञ्जरित कर दिया।

"कमर! मैं तुमसे बहुत बार कह चुका हूँ कि अब तुमसे मेरी जरा भी दिलचस्पी नहीं रही। अगर तुमने भाईजान की जिन्दगी पर कोई खौफनाक हमला करने का इरादा किया, तो तुम्हारे हक में ठीक न होगा!"—परवेज ने कहा। इस समय उसकी मुखाकृति पर क्रोध की आभा झलक रही थी।

"क्या कहा? ठीक नहीं होगा?—तुम अपने आपको भूले जा रहे हो शाहजादे! होश की दवा करो। तुम्हारी सारी इज्जत व हुर्मत इस वक्त मेरे हाथ में है। अगर तुमने मेरे रास्ते में पड़ने की कोशिश की, तो इसका अञ्जाम अच्छा न होगा—"

"कमर! तुम अन्धे बनते जा रहे हो। तुम भूल गये हो कि मैंने ही, डूबते हुए को तिनके का सहारा दिया था। तुम्हें शाही सजा मिली थी, मगर मैंने ही हुक्म उदूली कर तुम्हारी जान बचाई

थी और इस महल में तुम्हें पनाह दिया था....तुमने यहाँ आकर मुझ पर न जाने कैसा जादू फेरा कि मेरा पाक दिल नापाक हो गया। तुमने भाई से बगावत कराई और न जाने क्या-क्या कराया मगर अब होश में आ गया हूँ। यह देखो मेरी तलवार....'' शाहजादे ने अपनी तलवार खींच ली और दौड़कर कमर की गर्दन पकड़ ली।

"भूल गये शाहजादे! उस दस्तावेज की बात? अगर वह कहीं सुलतान के हाथों में पहुँच जाय, तो क्या तुम्हारी इज्जत सुलतान के सामने वही बनी रहेगी? तब क्या तुम अपनी जान की खैर मना सकते हो....मगर याद रखो! वह दस्तावेज एक ऐसे आदमी के पास है, जो मेरी मौत का हाल सुनते ही, उसे सुलतान के सामने पेश कर देगा। तब उस वक्त तुम्हारी जो हालत होगी वह तुम खुद समझ सकते हो।''

"या खुदा! जरा-सी भूल कहर मचा सकती है?''

शाहज़ादे ने अपना सर पकड़ लिया। उसके हाथ की तलवार छूटकर जमीन पर गिर पड़ी।

कमर कहता गया—"नादान न बनो शाहजादे! सुलतान को नेस्तनाबूत करने में मेरी ही भलाई नहीं, तुम्हारी भी भलाई है.... दिल को सम्हालो। वह देखो—वजीर चला आ रहा है—चेहरा कुछ तमतमाया हुआ सा है, मैं चला, तुम होशियारी से निपट लेना''—कमर चला गया।

वजीर ने आकर शाहजादे को अभिवादन किया, फिर कहने लगा—"गुस्ताखी माफ कीजियेगा शाहजादे साहब! मुझे खुफिया तौर से पता लगा है कि मल्कयेआलम, जिन्हें शाहंशाह ने शहर-बदर करने का हुक्म दिया था, अभी तक आपके महल में मौजूद हैं।''

यह बात सुनते ही शाहजादा काँप उठा। अपने भयभीत नेत्रों

से वज़ीर की ओर देखा। उस समय वजीर की मुखाकृति गम्भीर थी—आँखों में क्रोध की लाली थी। अपने चेहरे पर आनेवाली घबड़ाहट को छिपाते हुए शाहजादा बोला—"वजीर, यह क्या कह रहे हो तुम ?"

"ठीक कह रहा हूँ शाहजादे साहब ! मेरे खुफियों की बात गलत नहीं होती। मुझे पूरा यकीन है कि मल्कये-आलम को आपने छिपा रखा है और दोनों आदमी मिलकर फिर सुलतान की जान लेने की कोशिश में हैं।"

"वजीर !"—शाहजादा क्रोधपूर्ण मुद्रा बनाकर बोला।

"गुस्सा न कीजिये शाहजादे ! असली बात छिपाने की कोशिश फिजूल है। बुड्ढे वजीर से आपकी कोई हरकत छिपी नहीं है....मैं उम्मीद करता हूँ कि मुझे शाहजादे साहब को यह न बताना पड़ेगा कि जलूस में सुलतान की जान पर खौफनाक हमले में खुद आपका ही हाथ था—"

"मेरा हाथ ?"—शाहजादा गरज पड़ा।

वजीर ने कोर्निश की—"शाहजादे साहब को मालूम हो कि मैं यह भी जान चुका हूँ कि यह कमर कौन है ?"

"तुम यह जान गये हो—या खुदा ?"

"सब कुछ जानते हुए भी मैं अब तक खामोश था—सिर्फ आपके लिये।"

"तुम वजीर हो या शैतान !"—शाहजादे के मुँह से एकाएक निकल पड़ा।

"इतनी बड़ी सलतनत का काम देखना शैतान का ही काम है शाहजादे साहब !" और वजीर ठहाका मार कर हँस पड़ा—"आखिरी बार दरख्वास्त करता हूँ कि आप लोग अपने-अपने इरादे से बाज आवें।"

● ●

मेहर ने अन्दर आते हुए सुलतान की ओर देखा।

उसे महान आश्चर्य हुआ, यह देखकर कि आज सुलतान के मुखमण्डल पर तेज की आभा झलक रही है। सारा दुख, सारी जलन आज उनसे दूर थी।

सुलतान प्रसन्न चित्त, हँसते हुए मसनद के सहारे पलङ्ग पर बैठ गए और बोले—"मेहर! आज मैं न जाने क्यों बहुत खुश हूँ।"

"फजल है खुदा का शाहंशाह!..." मेहर ने कहा और आकर सुलतान के पास बैठ गई।

सुलतान बोले—"तुम अभी तक खुश न हो सकी मेरी मल्का! उठो! आज मुझे इन नाजुक हाथों से थोड़ा सा शरबते अनार...."

मेहर को बड़ा आश्चर्य हुआ। आज क्या बात है कि सुलतान इतने खुश हैं! शराब, जिसे छूने से भी उन्हें नफरत हो गयी थी, आज उन्हें क्यों कर पसन्द आयी? मेहर ने बहुत कोशिश के साथ कहा—"शराब न पियें मेरे मालिक!"

"शराब न पियूँ—न पियू—कत्तई नहीं! नहीं मैं जरूर पियूँगा। उठो मेहर!"

सुलतान के आग्रह करने पर मेहर उठी और प्याला भरकर सुलतान को पिलाने लगी। कई प्याले खाली हो गये। सुलतान पर धीरे-धीरे शराब का नशा चढ़ने लगा—

"तुम....तुम भी मेरी मेहर! इतनी खूबसूरती लेकर बरबाद कर रही हो—मैं प्यासा हूँ, प्यासा हूँ मेहर! और तुम? तुम्हारे हाथ में पानी है, मगर मुझे पिलाना नहीं चाहती....मगर....मगर वह कौन?...वह कौन हाथ में बन्दूक ताने खड़ा है...!"

"कहाँ? कहाँ मेरे आका?"—मेहर चौंक पड़ी।

"ओह! भाग गया वह!...बुजदिल कहीं का! अपनी बन्दूक से मेरे सीने को छेद भी नहीं दिया—कि मैं हमेशा के लिए अपनी प्यास को लिए हुये सो जाता—सारी जलन मिट जाती....और यह क्या? यह आग कैसी?...मेहर! देखो तो, यह आग किधर लगी है?"

"कहाँ है आग शाहंशाह!" मेहर को सुलतान की अवस्था बिगड़ती हुई मालूम पड़ी।

"तुम नहीं देख रही हो आग? यह देखो!"—कहकर सुलतान ने अपने सीने पर का कपड़ा चीर दिया—"देखो! आग यह है....मेरे दिल में...और यह मुँह रट रहा है प्यास! प्यास!!"

"बिस्तर पर आराम फरमायें मेरे आका!"—मेहर ने सुलतान को पलंग पर लिटा दिया।

सुलतान बोले—"तुम भी मेरे पास आ जाओ मेहर! मुझे डर लग रहा है। चारों ओर से डरावनी सूरतें नजर आ रही हैं। तुम आ जाओ मेरे पास। मुझे अपना बना लो....यह क्या?....नदी?...उफ्! बचाओ! बचाओ!! नदी बही आ रही है-"

"नदी कहीं नहीं है मेरे मालिक!"

"नदी बही आ रही है—तुम उसे नहीं देख सकती। यह देखो।" सुलतान ने मेहर के शरीर पर हाथ रख दिया—"यह नदी है—हाँ मेहर। तुम्हारा शरीर ही नदी है, तालाब है—और मैं हूँ प्यासा?....आओ, मेरी प्यास बुझा दो—मैं प्यासा हूँ—प्यासा हूँ"—कहते हुए सुलतान ने मेहर को अपने अंकपाश में कस लिया।

अर्द्धरात्रि अपना भयानक रूप लेकर आई। बादल गरज रहे थे। हवा जोर से बह रही थी। बिजली रह-रहकर चमक उठती थी। मालूम होता था कि अभी आकाश फट पड़ेगा—प्रलय हो जायेगा।

सुलतान नशे के झोंक में मेहर को अपने वक्षस्थल से लगाये हुए अनित्य निद्रा में निमग्न थे। मेहर भी निश्चिन्त सो रही थी।

बाहर बिजली जोर से कड़की–मेहर का सारा बदन काँप उठा। नींद उचट गई! उसका हृदय न जाने क्यों हाहाकार कर उठा।

उफ् यह बादलों की गरज, यह बिजली की चमक, यह हवा की सनसनाहट—कितनी भयानक है उसके लिये!

आह! अगर आज वह अपने बचपनवाले खुशनुमा जंगल के पास होती तो क्या आनन्द आता? पानी बरसता, मोर नाचते और पपीहा बोलता–पी कहाँ! पी कहाँ!! और उसी धुन में पगली-सी होकर वह भी अपने प्रियतम की खोज करती—क्या मजा आता?

मेहर ने धीरे-धीरे अपने को सुलतान के बाजुओं से छुड़ाया और पलंग से उतर कर खिड़की के पास चली आई।

बाहर अन्धकार छाया हुआ था। अभी तक बूँदे नहीं पड़ रही थीं परन्तु मालूम होता था कि शीघ्र ही वर्षा होनेवाली है।

मेहर का दिल जलने लगा। उसे ऐसा मालूम हुआ कि उसके बदन में आग-सी लगी हुई है, उसका दम घुटा जा रहा है और यदि वह जल्द ही भाग न गई तो हमेशा के लिए वहीं कैद रह जायेगी।

नियति का चक्र तेजी से घूम रहा था।

मेहर का दम घुटने लगा—"अब मैं नहीं रह सकती—नहीं रह सकती इस जेलखाने में—भाग जाऊँगी"—

मेहर दरवाजे की ओर बढ़ी। आहिस्ते से दरवाजा खोलकर वह बाहर निकल आई। कमरे में घोर सन्नाटा छा गया। अँधेरी रात में दूर पर कहीं उल्लू कर्कश आवाज में बोल उठा।

"बचाओ! बचाओ मेहर!—मुझे बचाओ"—सुलतान ने आँखें खोलीं। अभी तक उनपर शराब का नशा था—"मुझे छोड़-

कर नहीं जा सकती—मैं मर जाऊँगा—पकड़ो ! वह भागी जा रही है—"

सुलतान पलंग पर से हड़बड़ाकर उठे और दरवाजे की ओर झपटे।

उसी समय दौड़ते हुए किसी व्यक्ति के आने की आहट सुन और दूसरे ही क्षण बुड्ढा वजीर हाँफता हुआ सुलतान के सामने आकर खड़ा हो गया—"आप कहाँ जा रहे हैं ? कहाँ जा रहे हैं ?"

"हटो रास्ते से। मुझे जाने दो, वह भागी जा रही है।"

"मगर शाहंशाह ! आप बाहर न जाँय, खतरा है। आपकी जान लेने की साजिश की गई है—"

"तुम रोको मत—मेरी जिन्दगी और मौत का सवाल है—जाने दो—"

"नहीं जाने दूँगा आपको ! शाहजादे और कमर ने मिलकर साजिश की है, मैं आपको बचाने के लिये दौड़ा चला आ रहा हूँ—"

"तुम झूठे हो—हटो मेरे रास्ते से"—

सुलतान ने बुड्ढे वजीर को अलग ढकेल दिया और आप दौड़ते हुए अँधेरे में घुस गये। विद्युत प्रकाश में उन्हें दूर पर जाती हुई एक स्त्री जैसी आकृति दिखाई पड़ी। वे उसी ओर दौड़े।

❀ ❀ ❀ ❀

"सिपहसालार ! शाहंशाह की जान लेने की साजिश की गई है। परवेज और कमर अपने महल से बाहर हैं। सुलतान भी मेहर के पीछे बाहर निकले हैं, खुदा ही खैर करे। तुम सिपाहियों को लेकर महल के आस-पास फैल जाओ। परवेज, कमर, मेहर या सुलतान—इनमें से जो भी मिले उन्हें रोक लेना। जाओ !"—वजीर ने कहा।

सिपहसालार ने वजीर को कोर्निश की।

❀ ❀ ❀ ❀

सुलतान दौड़ते हुए उस औरत के पास जा पहुँचे। वह मेहर ही थी।

सुलतान मेहर को अपने बाहु-पाश में आबद्ध कर हाँफते हुए बोले—"मैं तुम्हें नहीं जाने दूँगा—तुम्हारे चले जाने से मर जाऊँगा! तुम न जाओ! न जाओ!"

"शाहंशाह!"—मेहर ने सिसकते हुए सुलतान के वक्षस्थल पर अपना सर रख दिया।

उसी समय दूर पर कुछ खट-खट का शब्द सुनाई पड़ा। सुलतान मेहर को छोड़कर उस ओर घूमें कदाचित इस बात का पता लगाने के लिये कि यह किस तरह का शब्द है।

दूर पर सुलतान को आदमियों की धुंधली छाया दीख पड़ी।

उसी समय 'धाँय-धाँय' बन्दूक छूटने की आवाज गूँज उठी। सुलतान ने अपना कलेजा थाम लिया। वे चक्कर खाकर भूमि पर गिर पड़े। उनके मुख से निकली हुई करुण चीत्कार चारों ओर प्रतिध्वनित हो उठी। मेहर सुलतान के पास पहुँची। उसने देखा, सुलतान के कलेजे से खून का फौव्वार छूट रहा है।

"सुलतान! शाहंशाह!"—मेहर पछाड़ खाकर गिर पड़ी—"क्या हुआ आपको? यह किस जालिम का काम है? किसने मेरी दुनियाँ उजाड़ दी?"—मेहर जोरों से रो पड़ी। उसने जमीन पर पड़े हुए सुलतान के सर को अपनी गोद में रख लिया।

सुलतान के शिथिल मुख से सिर्फ इतना ही निकला—"मेहर! अब मैं चला।"

"या अल्लाह! मैं कहीं की न रही। आका! मेरे मालिक!" मेहर सुलतान के शरीर से लिपट गई।

उसी समय अन्धकार को चीरता हुआ एक मनुष्य वहाँ आ खड़ा हुआ। मेहर ने उसे पहचाना। वह था जहूर।

"जहूर! तुम यहाँ?"—मेहर बोली—"तो क्या यह तुम्हारा

ही काम है ? क्या तुम्हीं ने मेरी मुहब्बत पाने के लिये इस फरिश्ते को अपनी बन्दूक का निशाना बनाया है इतने हैवान बन गए तुम ? मेरी दुनियाँ उजाड़ते हुए तुम्हारा कलेजा टुकड़े-टुकड़े न हो गया ?"

"मेहर ! मेरा यह काम नहीं है । मैं तो बन्दूक की आवाज सुनकर इधर आ गया हूँ—"

"तुम मुझे भुलावे में डाल रहे हो । खुदा तुम्हें गारत करे जहूर ! खुदा तुम पर गजब ढाये, कहर ढाये....हाय मेरे आका !"

"मेरे आका, क्या हुआ ?..." कहता हुआ वृद्ध वजीर वहाँ आ पहुँचा । उसके पीछे सिपाहियों से घिरे हुए शाहजादा परवेज और कमर थे । वजीर ने उन्हें बन्दी बना लिया था ।

सुलतान की हालत देखते ही वजीर हाय कर उठा—"मुझे थोड़ी-सी देर हो गई, इतने में ही इन शैतानों ने शाह की जान ले ली—"

"वजीर ! मेरे बुजुर्ग !" शाहंशाह के मुख से अस्फुट शब्द निकले ।

"शाहंशाह !"—बेचारा वजीर रो पड़ा—"यह सारा काम शाहजादे का है—"

"शाहजादे का ?"—सुलतान की मुद्रा जैसे क्षीण होती जा रही थी ।

"हाँ भाईजान ! मैं ही आपका कातिल हूँ—मैं ही खूनी हूँ ।" कहते-कहते शाहजादा परवेज रो पड़ा ।

"खूनी यह नहीं, मैं हूँ—इधर देखो सुलतान !"—कमर गरज उठा । उसके हाथ में अब भी बन्दूक विद्यमान थी—"देखो ! मैं कौन हूँ—"

कहते हुए कमर ने अपना बड़ा-सा साफा उतार कर जमीन पर

फेंक दिया। अन्दर से लम्बे-लम्बे बाल निकल आये। मुँह पर की नकली मूँछें हटा लीं—

"यह कौन? मलकए आलम?"

"हाँ। वही, जिसे तुमने एक दिन मक्खी की तरह मसलना चाहा था, मगर जिसने अपनी चतुराई से तुमसे आज ऐसा इन्तकाम लिया है कि तुम कब्र में भी याद रखोगे।"

"परवेज!"—शाहजादा ने पुकारा।

"भाईजान!"—परवेज रो पड़ा—"मुझसे खता हुई—मगर वह खौफनाक खता आपकी जान लेकर ही रही—उफ! मुझे इसी नापाक मलका ने बहकाया।—मैंने चुपके से इसे अपने महल में लाकर मर्द का लिबास पहनाया और अपने दोस्त कमर के नाम से मशहूर किया...सब कुछ ईर्षा ने किया।"—कहकर शाहजादे परवेज ने मलका की गर्दन पकड़कर दूर ढकेल दिया।

"वजीर! मेरे नादान भाई को राह-रास्ते पर लाने की कोशिश करना"—सुलतान बोले—"मेहर..." सुलतान की अवस्था शोचनीय होती जा रही थी।

"मेहर?"—सुलतान टूटी-फूटी आवाज में बोले—"मैं अब चला। अपनी प्यास, अपनी जलन, अपने साथ ही लिये जा रहा हूँ। तुम इतनी सितमगर निकलीं कि मेरा भी ख्याल न किया। तुम्हारे ही लिए मैं बरबाद हुआ, मगर तुमने मेरी प्यास न बुझाई, मुझे अफसोस नहीं है मेहर। मैं खुश हूँ कि आज जिगर की सारी जलन रफा हो जायेगी? अफसोस सिर्फ एक बात का है कि कब्र में तुम्हारी सूरत देखने को न मिलेगी...." सुलतान का गला फँस गया—मौत के आसार करीब नजर आने लगे—"हो सके तो तुम जहूर को खुश कर देना मेहर।"

"यह क्या कह रहे हैं मेरे आका?" मेहर ने अवरुद्ध कण्ठ से

कहा—"अब यह नामुमकिन है। आप मेरे जिगर में हमेशा के लिए जलन छोड़े जा रहे हैं, मैं कहाँ जाऊँगी ? क्या करूँगी ? शाहंशाह ! सुलतान !!"—

"दिल पर काबू रखो मेहर। मेरे लिए अफसोस न करो। खुदा को याद करो और जिस तरह तुम्हें खुशी हासिल हो, वही करना। मैं वजीर को कहे जाता हूँ कि तुम्हारी हरेक बात पूरी की जावे—" सुलतान को एक हिचकी आई।

दूर से किसी के गाने की आवाज आ रही थी—

जिन्दगी भर रह गये प्यासे तुम्हारी चाह पर।
हो भला अब भी तो कुछ दे दो खुदा की राह पर॥

"हैं ? यह किसकी आवाज ?"—गाने की आवाज सुनकर सुलतान ने एक बार फिर आँखों को इधर-उधर फेरा—"कादिर !.... कादिर ! यहाँ भी आ गया, बुलाओ उसे, बुलाओ मेहर।....या खुदा....या खुदा...." दूसरी हिचकी आई फिर तीसरी-और अभागा सुलतान अपनी प्यास लिए हुए इस संसार से चल बसा।

मेहर रो पड़ी—"मेरे आका ? मेरे मालिक ?? मेरे शाहंशाह ???"

शाहजादा, वजीर आदि ने सुलतान के शव का अभिवादन किया।

दूर से एक घोड़े की टाप, उसी ओर से आती हुई सुनाई पड़ी और थोड़ी ही देर में एक घुड़सवार आकर वहाँ रुका।

उसपर दृष्टि पड़ते ही मेहर चौंक पड़ी। वह उसका अब्बा अब्दुल्ला था।

"अब्बा !...." मेहर उठकर बुड्ढे की ओर बढ़ी।

"मेरी बेटी !" कहकर वृद्ध अब्दुल्ला ने उसे अपने कलेजे से लगा लिया—"आज सालों से इसी घोड़े पर दौड़ता हुआ तेरी खोज कर रहा हूँ बेटी ? आज यह सुनकर कि तू सुलतान के महल

में है, इधर आ निकला मगर यह कौन है ?"—अब्दुल्ला की दृष्टि सुलतान पर जा पड़ी—"मुसाफिर ? वही मुसाफिर ?"

"वे मुसाफिर नहीं, सुलतान काशगर थे अब्बा ?" मेहर ने कहा।

बृद्ध ने झुककर सुलतान के शव के प्रति अपना सम्मान प्रकट किया।

थोड़ी ही देर में अब्दुल्ला की दृष्टि जहूर पर जा पड़ी। उसे देखकर वृद्ध की भृकुटी तन गई। उसकी तलवार म्यान से बाहर हो गई।

"इसे माफ कर दो अब्बा ?" मेहर ने कहा।

"माफ कर दूँ ? दुश्मन के-साँप के-बच्चे को ?"

"मेरे कहने से माफ कर दो मेरे अच्छे अब्बा—"

"अब्बा ?"—मेहर बोली—"जब से तुम्हें छोड़ा, मुझे परेशानी ही परेशानी उठानी पड़ी। लाखों मुसीबतों को झेलते-झेलते मैं ऊब गई हूँ। मैं अब फिर वहीं चलना चाहती हूं—वहीं अपने कबीले में। मुझे ले चलो मेरे अब्बा ? मैं यहाँ रहूँगी तो पागल हो जाऊँगी। इन सब चीजों की याददाश्त यहाँ रहने पर मेरे दिल की जलन को बढ़ायेगी। चलो अब्बा, मैं एक पल-भर भी नहीं रुकना चाहती....और रुकूँ भी किसके लिये ?"

"मैं बहुत खुश हूँ बेटी ! चलो !"

मेहर सुलतान के शव के पास आकर बैठ गई और उनके सिर को अपनी गोद में लेकर बोली—"मैं जा रही हूँ मेरे आका ! मुझे माफ करना। मैंने सचमुच तुम पर जुल्म ढाया—पानी रहते हुए भी तुम्हें प्यासा रखा-आज तुम्हारे चले जाने पर यह सब बातें मुझे याद आ रही हैं। मैं जा रही हूँ अफसोस और परेशानी से जा रही हूँ—खौफनाक जंगल में घूमती हुई तुम्हारी याद किया करूँगी मेरे मालिक।"

कान्त-साहित्य-सदन

भडुवारिया, मिर्जापुर